अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-38, अंक-10, 1-15 जनवरी, 2014

स्मृति-शेष

गांधी की हत्या
क्या सच क्या झूठ
का
पुनर्पाठ क्यों?

चून्नीभाई वैद्य को श्रद्धांजलि!

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुखपत्र
सर्वोदय जगत
सत्य-अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 38, अंक : 10, 1-15 जनवरी, 2015

संपादक — **बिमल कुमार** — मो. : 9235772595
कार्यकारी संपादक — **अशोक मोती** — मो. : 7488387174

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह, भवानी शंकर 'कुसुम', बिमल कुमार, अशोक मोती

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	पांच रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353

विज्ञापन दर

पूरा पृष्ठ	:	2000 रुपये
आधा पृष्ठ	:	1000 रुपये
चौथाई पृष्ठ	:	500 रुपये

इस अंक में...

1. सर्वोदय विचार की विशिष्टता... 2
2. गांधी शहादत के परिप्रेक्ष्य में... 3
3. समन्वय की बुनियाद... 4
4. गांधी बनाम नेहरू बनाम पटेल... 7
5. गांधी अर्थनीति की बुनियाद.... 9
6. गांधी की ओर लौटना होगा... 11
7. मेरे पितातुल्य चुनीकाका... 12
8. गांधी की हत्या : क्या सच, क्या... 13
9. जब बाबा ने मुझसे मैत्री का हाथ... 15
10. अधिवेशन समाचार... 17
11. कविता : अघटन घटना... 18
12. और अन्ततः... 19
13. दो पत्र... 20

'सर्वोदय जगत' में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। उनके साथ सर्व सेवा संघ या संपादक मंडल का सहमत होना जरूरी नहीं है।

सर्वोदय विचार की विशिष्टता

❑ विनोबा

बहुत सारे विचार कुछ हद तक जोड़ते हैं, लेकिन उसके बाद तोड़ते हैं। मिसाल के तौर पर, राष्ट्रवाद के भीतर की ताकतों को जोड़ता है, लेकिन दूसरे राष्ट्रों से अपने को अलग करता है। जातिवाद भी इस तरह दो टुकड़े करता है। इसी तरह पंथवाद, पक्षवाद, धर्मवाद अपने और दूसरे, ऐसे दो विभाग करते हैं। आजकल तो अध्यात्मवाद भी दो टुकड़े करने लगा है कि एक ओर व्यक्ति है और दूसरी ओर जगत है। इस प्रकार के दो टुकड़े किये बिना विचारकों का समाधान नहीं होता है। अद्वैत विचार ही एक ऐसा विचार निकला, जिसने जीव, जगत और परमेश्वर में अभेद चाहा। लेकिन वह विचार की हद तक ही सीमित था। जहां विचार को व्यवहार की सत्ता और पारमार्थिक सत्ता, इन दो सत्ताओं में बांटा, वहां दो टुकड़े हो गये।

इस जमाने में सर्वोदय का विचार सबको जोड़ने वाला विचार है। इस विचार ने व्यक्ति के देहकार्य, सेवाकार्य और मुक्तिकार्य, तीनों को एक कर दिया है। स्वार्थ, परार्थ और परमार्थ का भेद मिटाने वाला यह नया दर्शन हमें मिला है। मतलब यह नहीं कि यह हमारा बनाया हुआ दर्शन है, ऐसा कोई अहंकार हमें है। लेकिन पुराने दर्शनों की खूबियां और खामियां देखने का मौका मिला है, तो उन खामियों को टाल कर और खूबियों को लेकर—उनमें नयी खूबियां जोड़कर यह नया दर्शन बना है। मेरे जीवन में जितने भी काम हुए, सभी दिलों को जोड़ने के एकमात्र उद्देश्य से हुए।

जोड़ने के लिए, परस्पर-हृदयों को जोड़ने के लिए गुणग्रहण करना होगा। हमें यह आदत डालनी होगी कि हम सभी का गुण ही देखें। जैसे लोहचुम्बक लोहे के कणों को अपनी ओर खींच लेता है, वैसी हमारी गुणचुम्बक वृत्ति बन जाये। इन्सान के दिल के अन्दर खजाना भरा है। पैसे का नहीं, गुणों का खजाना दिल की गहराई में है। ऊपर-ऊपर तो बाहर की हालत की वजह से कुछ दोष दिखायी देते हैं, जैसे फल के ऊपर के छिलके पर हवा का असर होता है। परन्तु मनुष्य-हृदय गहराई से खोजा जाये तो अन्दर गुणों को खजाना ही मिलेगा। एक पिता ने मरते समय अपने बच्चों से कहा कि तुम्हारे लिए खेत में खजाना गाड़ा हुआ है। पिता की मृत्यु के बाद बच्चों ने सारा खेत गहरा खोद डाला, लेकिन कुछ मिला नहीं। बारिश आ जाने के बाद, लेकिन, उस गहरी खोदाई के कारण फसल दस गुना आयी। तब बच्चों की समझ में बात बायी कि खजाने के मानी क्या थे! ऐसे ही हर इन्सान के दिल को खोदेंगे तो खजाना मिलेगा।

दिल खोदने के लिए जिस कुदाली की जरूरत है, उसका नाम है विश्वास! विश्वास रखने पर जो मिलेगा, वह अन्यथा नहीं मिलेगा। इन्सानियत पर विश्वास रखने से हृदय में छिपी हुई भगवान की मूर्ति बाहर प्रकट होती है। विश्वास एक अत्यन्त महत्त्व की शक्ति है। बच्चे का माँ पर इतना गहरा विश्वास होता है कि माँ जो भी कहती है, बच्चा उसे मान लेता है। मेरी माँ ने मुझ पर विश्वास रखकर कहा कि तुम मेरे लिए मराठी में गीता लिख दो, तो मुझसे वह काम हो पाया और गीताई प्रकट हो सकी। यह विश्वास का चमत्कार है। ❑

संपादकीय

गांधी शहादत के परिप्रेक्ष्य में

गांधीजी जिस विचार का प्रतिनिधित्व करते थे तथा जिन सूत्रों को उन्होंने विकसित किया, उनकी हत्या का प्रयास सन् 1925 से चल रहा है। सन् 1919-20 से 1924-25 के दौरान असहयोग आंदोलन, स्वदेशी एवं वैकल्पिक रचना के आंदोलन के फलस्वरूप दो प्रभाव हुए थे। एक तो राष्ट्रीय एकता का निर्माण हुआ था, जिसमें हिन्दू-मुस्लिम एकता प्रमुख थी। लेकिन यह भी सच है कि तमाम अन्य पहचानों के जन-समूह अपने को राष्ट्रीय पहचान के अंतर्गत एकीकृत करते गये थे। दूसरा प्रभाव यह हुआ था कि पूंजीवाद एवं पूंजीवादी उपनिवेशवाद का विकल्प, लोक स्तर से, रचनात्मक कार्यों के माध्यम से विकसित होना शुरू हुआ था।

ऐसा लग रहा था कि भारत की स्वतंत्रता आसन्न है। ब्रिटेन में, लेबर पार्टी जो सत्ता में थी, उसने इसके संकेत भी दिये थे। लेकिन लेबर पार्टी के सत्ता से हटने के बाद ब्रिटेन की भारत नीति में भारी बदलाव आया। उन्होंने देश में तमाम पहचानों को उकसाया कि वे अपने को अलग स्वायत्त राजनीतिक इकाई के रूप में प्रस्तुत करें। जिस भारत पर अंग्रेज शासन कर रहे हैं, उसमें अनेक स्वायत्तताएं हैं, यह सिद्धांत अंग्रेजों द्वारा प्रतिपादित किया गया।

इसी सिद्धांत के अंतर्गत मुस्लिम स्वायत्तता, सिख स्वायत्तता, दलित जातियों की स्वायत्तता आदि को राजनीतिक संरक्षण एवं बढ़ावा दिया गया। इनके अलावा रजवाड़ों की स्वायत्तता को भी उकसाया गया। इसके साथ ही भारत में देशी पूंजीवाद के कुछ लघु द्वीपों को खड़ा करने का प्रयास किया गया जो एक ओर तो स्वदेशी आंदोलन को कमजोर कर सकें तथा दूसरी ओर सुदूर भविष्य में वैश्विक पूंजीवाद के सहयोगी बन सकें।

इस प्रकार सन 1925 के बाद, अंग्रेजी शासन की नीति, भारत में हर स्तर पर भेद को बढ़ावा देने की नीति रही। आज तमाम दस्तावेज उपलब्ध हैं जो ये बताते हैं कि अंग्रेजों ने झूठे ऐतिहासिक तथ्यों का निर्माण किया। एक ओर मुसलमानों को यह बताने की कोशिश की गयी कि वे अलग राष्ट्र हैं, तो दूसरी ओर हिन्दुओं को यह बताने की कोशिश की गयी कि मुसलमानों ने हिन्दुओं पर कितने अत्याचार किये थे। झूठे इतिहास को लिखने की जो शुरुआत अंग्रेज इतिहासकारों ने किया था, उसे मुस्लिम सम्प्रदायवादियों एवं हिन्दू सम्प्रदायवादियों—दोनों ने आधार बनाकर आगे बढ़ाने का कार्य किया। मुस्लिम सम्प्रदायवादी एवं हिन्दू सम्प्रदायवादियों, दोनों में एक और समानता थी। दोनों पूजीवादी साम्राज्यवाद पर निर्भर थे तथा अपने राष्ट्रीय राजनीतिक अधिकारों को प्राप्त करने के लिए पूंजीवाद समर्थक भी थे। उन्होंने यह स्पष्ट संकेत दे दिये थे कि उपनिवेशवाद के खात्में के बाद वे पूंजीवादी विस्तार में स्वतंत्र राजनीतिक घटक के रूप में कार्य करते रहेंगे।

इसीलिए सन् 1925 से 1930 के बीच जो मुस्लिम या हिन्दू साम्प्रदायिक शक्तियां उभरीं वे न केवल कांग्रेस विरोधी थीं, बल्कि वे रजवाड़ों की व जमींदारों की समर्थक थीं तथा उनके द्वारा घोषित भी थीं। इन संगठनों द्वारा गांधी के विरोध को इस रूप में ही देखना होगा कि ये भारत में ब्रिटिश शासन की भावी योजना के अंग थे, जिसे इन्होंने बखूबी निभाया। सन् 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान, इन्होंने देश भर में अंग्रेजों के मुखबीर के रूप में काम किया।

अलग राष्ट्र निर्माण को वास्तविक स्वरूप दिया जा सकता है, इसका प्रमाण भी ब्रिटिश शासन ने दिया। सन् 1935 में अलग बर्मा राष्ट्र का निर्माण कर उन्होंने अपना इरादा जाहिर कर दिया था। सन् 1932-33 के दौरान बर्मा का बहुमत भारत से अलग होने का विरोधी था। फिर भी ब्रिटेन ने अपनी भविष्य योजना के अंतर्गत उसे अलग राष्ट्र के रूप में भारत से अलग कर दिया। भारत में मुसलमानों को, सिक्खों को, रजवाड़ों को तथा कई सीमाक्षेत्र के प्रदेशों को उकसाया गया कि वे अलग राष्ट्र हो सकते हैं और कई बर्मा बन सकते हैं। शर्त यह थी कि भविष्य में वे पूंजीवादी केन्द्रों के सहयोगी बनकर रहेंगे।

साम्प्रदायिकता एवं पूंजीवाद के इसी गठजोड़ वाली शक्तियों ने गांधी की हत्या की। वह किसी सिरफिरे का पागलपन नहीं था। यदि ऐसा न होता तो गांधी की हत्या को उन शक्तियों द्वारा आज भी उचित ठहराने का प्रयास न किया जा रहा होता।

साम्प्रदायिकता एवं वैश्विक पूंजीवाद के इस गठजोड़ की शक्तियों का भारत में उभार सन् 1985 के बाद फिर देखा गया। जब पूंजीवादी वैश्वीकरण को भारत में सघन प्रवेश कराने के लिए राजसत्ता को अपने नियंत्रण के दायरे कम करते हुए, उन्हें पूंजीवादी बाजार को सौंपने थे; तथा जल-जंगल-जमीन-खनिज आदि को नये सिरे से दोहन के लिए खोलना था, तो इन शक्तियों का पुनः इस्तेमाल हुआ। शाहबानो केस, बाबरी मस्जिद का ध्वंस और उसके बाद साम्प्रदायिक उत्तेजना का विस्तार—इन सबने पूंजीवादी वैश्वीकरण एवं पूंजीवादी दोहन को सरल बना दिया, क्योंकि इनके विरोध के स्वर साम्प्रदायिक उत्तेजना व हिंसा में दब से गये। राजनीतिक विमर्श के मुद्दे बदलना, पूंजीवादी विस्तार के लिए सदैव जरूरी होता है। इसी प्रक्रिया में आज लव-जेहाद एवं घर वापसी (धर्मान्तरण) जैसे मुद्दे फिर उठायो जा रहे हैं। इसी माहौल में गांधीजी की हत्या को जायज ठहराने की कवायद चल रही है, क्योंकि आज पूंजीवादी वैश्वीकरण के विकल्प में गांधी के अलावा और कोई नहीं है। झूठे इतिहास का निर्माण एवं पूंजीवाद का समर्थन—साम्प्रदायिकता के विकास के ये दो आधार सन् 1925 से है। आज भी यही हो रहा है। विमल कुमार

स्मृति-शेष

समन्वय की बुनियाद : सर्व-धर्म-समभाव

❑ काकासाहेब कालेलकर

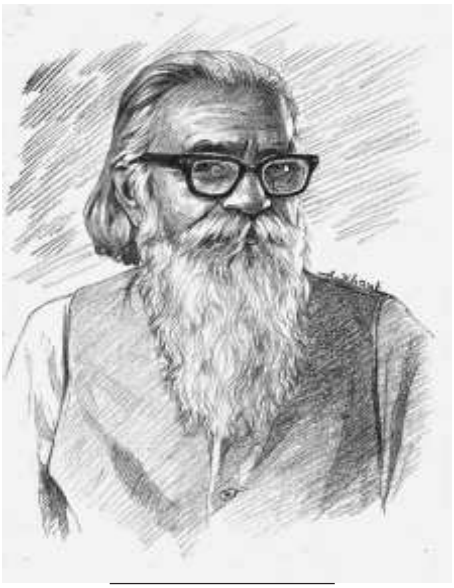

चार वर्णों के लोग एक-दूसरे से विवाह करते थे, इसकी मिसालें तो हमारे यहां असंख्य पड़ी हैं। किन्तु ऐसे मिश्रविवाह के नियम भी हमारे स्मृतिकारों ने विस्तार से बनाए हैं। इसलिए हमारे देश की आज की स्थिति को देखकर हरएक को यह साफ मालूम होना चाहिए कि सर्व-धर्म-समभाव से सहजता से निकलने वाला 'सर्व-धर्म-मम-भाव' स्वीकार करने में कोई हर्ज नहीं है।

समन्वय-दृष्टि को लेकर ही हमारे देश में बसने वाले तमाम धर्मों के विशाल धर्म-कुटुम्ब का जीवन-शास्त्र कैसा होना चाहिए, यह जैसा सूझे और जैसे-जैसे सवाल सामने आयें, वैसा हमने देखना है। अगर सभी धर्मों के एक विशाल धर्म-कुटुम्ब की स्थापना इस देश में हो सकती है, तो सारी मानवता का और सब मानव-समाजों का जिसमें अंतर्भाव हो सके, ऐसा एक कुटुम्ब-धर्म भी हमारे लिए होना ही चाहिए। उस कुटुम्ब-धर्म का मूल सूत्र है :

''उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।''

किसी ने मुझसे पूछा : ''गांधीजी ने आश्रम के नियमों में सर्व-धर्म समभाव व्रत दाखिल किया और कहा कि आश्रमवासी सभी धर्मों की ओर आदरभाव से देखेंगे। सभी धर्म सच्चे हैं, सभी के प्रति आदरभाव रखना चाहिए और जिस प्रकार मनुष्य-मनुष्य के बीच का ऊंच-नीच भाव हम निकाल देते हैं, उसी प्रकार धर्म-धर्म के बीच का ऊंच-नीच भाव हटाकर सभी धर्म समान हैं, ऐसी मानने की बात सुझायी है। लेकिन आप तो उससे भी आगे जाकर सर्व-धर्म-मम-भाव की बात सुझाते हैं। यह क्या चीज है, यह हमें समझाइये।''

मेरा जवाब यह था : सर्व-धर्म-मम-भाव कोई नया सिद्धांत नहीं है। एक सिद्धांत स्थापित करने के बाद उसी में से उत्पन्न होने वाले सिद्धांत को अंग्रेजी में 'करोलरी' कहते हैं। हम उसे 'फलित सिद्धांत' कहें। एक सिद्धांत में से फलित होने वाले सभी उपसिद्धांत मूल सिद्धांत की चिनगारियां होती हैं। एक सिद्धांत का मनन करने पर उसमें से फलित होने वाले छोटे-बड़े सिद्धांतों का वंश-विस्तार हम पाते हैं। मनन या ध्यान जितना उत्कट होगा, उतना ही वह विस्तार बढ़ता जाएगा। गांधीजी का काम तो ऋषि का है। ऋषि बीज बो देते हैं। सच्चा किसान जिस प्रकार बीज से धान की राशि पाता है, उसी प्रकार गांधीजी के बताये सिद्धांतों में से हमें अपना पूरा जीवनशास्त्र और समाजशास्त्र पाना है। जिस प्रकार हर साल खेती की फसल बढ़ती ही जाती है, उसी प्रकार हर जमाने को अपने सवाल जैसे ऊपर आते जायेंगे, वैसे अपना जीवनशास्त्र बनाना चाहिए।

सब धर्म अच्छे हैं, इस बात का विश्वास हो जाने के बाद 'सभी धर्म मेरे हैं; यह कहने में क्या हर्ज है? अच्छे का जो द्वेष करता है, उसे तो अधर्मी ही कहते हैं और धर्म कोई धन-सम्पत्ति नहीं या उपभोग की वस्तु नहीं कि कोई उसे ले ले तो दूसरे की हानि हो। इसी वृत्ति से इस्लाम में ज्ञान के बारे में कहा है कि सत्य ज्ञान चाहे कहीं पर भी पड़ा हो, मुसलमानों को चाहिए कि वे उसे अपनी ही खोयी हुई चीज मानें और उठा लें।

इस प्रकार सभी धर्म सच्चे और अच्छे हैं, इस बात का विश्वास हो जाने के बाद धर्म के संबंध में स्व-पर-भाव अपने-आप गल जाता है।

हमारे देश में तो एक ही कुटुम्ब में अनेकधर्मी लोग भी हो सकते हैं। वैष्णव और जैन जब एक-दूसरे से शादी करते हैं, तब दोनों एक-दूसरे के रिवाजों के प्रति आदर रखते हैं। आचार्य कृपलानी के एक भाई वेदांती संन्यासी हैं। उनके पिताजी वैष्णव भक्त थे। दूसरे एक भाई मुसलमान हैं अब यह बताइए कि सयानापन किसमें है? धर्म के लिए कुटुम्ब तोड़ने में? या सभी धर्मों का एक कुटुम्ब बनाने में?

हमारे पुराने धर्म-ग्रंथों में कहीं-कहीं भगवान को 'असुर' कहा है। पारसी-धर्म में तो भगवान को कहा है 'अहुर' और शैतान को कहा है 'देव'। परिभाषा का इतना बड़ा भेद होते हुए भी पारसी-धर्म की और हिन्दू-धर्म की सीख तो एक ही है : 'न्याय से पेश आओ, मुहब्बत से पेश आओ, दुराचार छोड़ दो और सदाचार को अपनाओ।'

संकुचित वृत्ति वाले लोग कहते थे कि विवाह करना ही हो तो दोनों में से एक को अपना धर्म छोड़कर दूसरे का धर्म स्वीकार कर लेना चाहिए। इन लोगों का आग्रह था कि विवाह के बाद फौरन ही औरत जिस प्रकार अपने पति की अटक उसका गोत्र और उसका दिया हुआ नाम धारण करती है, उसी प्रकार धर्म के बारे में भी होना चाहिए। ईसाइयों में रोमन कॅथलिक लोगों का तो अलग ही ढंग है। रोमन कॅथलिक स्त्री या पुरुष किसी भी धर्म के व्यक्ति के साथ विवाह कर सकता है। उसे अपना धर्म छोड़ने की जरूरत नहीं। लेकिन विवाह के समय दोनों को कबूल करना पड़ता है कि उनके बच्चे तो कॅथलिक धर्म का ही पालन करेंगे।

सरकारी कानून ने तो एक नई ही बात पेश की। उसने कहा कि भिन्नधर्मी लोगों को विवाह करना हो तो दोनों को चाहिए कि वे अपने-अपने धर्म का ही त्याग करें और जाहिर करें कि वे अब किसी धर्म के नहीं रहे हें तभी वे व्यवहार में विवाह कर सकते हैं पहले यह नियम सबके लिए था। किन्तु बौद्ध, सिख, जैन, ब्राह्मों, आर्यसमाजी आदि सम्प्रदायों के लोगों ने इसका सख्त विरोध किया। अब इन सम्प्रदायों के लोग भिन्नधर्मी होते हुए भी धर्म को इनकार किये बगैर व्यवहारिक विवाह कर सकते हैं।

इस प्रकार इस देश में जन्मे धर्मों ने अंदर-अंदर जो उदारता बतायी है, वही उदारता अगर दुनिया के सभी धर्म हमसे सीख लें तो उनकी कुछ भी हनि होने वाली नहीं है। अगर शैव ओर शाक्त एक-दूसरे से विवाह कर सकते हैं, जैन और वैष्णव एक-दूसरे से विवाह-बद्ध हो सकते हैं, द्वैतवादी और अद्वैतवादी के बीच विवाह हो तो कोई हर्ज नहीं मालूम होता, तो उसी प्रकार सभी धर्म सच्चे हैं, यह मानने के बाद उनमें अगर आहार-विहार, रहनी-करनी और विचार-सरणी में परस्पर अनुकूलता हो तो विवाह करने में क्या हर्ज है?

फिर ऐसे भिन्नधर्मी विवाह हमारे देश में कभी हुए ही नहीं, ऐसी बात भी नहीं। आर्यों ने नागकन्याओं के साथ विवाह किये थे। चीन देश की राजकन्या हमारे देश के राजपुत्र के साथ विवाह करे तो किसी को हर्ज नहीं मालूम होता था। प्रभु रामचंद्रजी की माता कैकेयी अफगानिस्तान से आयी थीं और गांधारी भी कन्दहार की राजकन्या थी, यह भला हम कैसे भूल सकते हैं?

लेकिन ऐतिहासिक खोज में गहरे पैठने की कोई आवश्यकता नहीं है। वैसे तो इतिहास-संशोधक चाहे जितना मसाला दे सकते हैं। चार वर्णों के लोग एक-दूसरे से विवाह करते थे, इसकी मिसालें तो हमारे यहां असंख्य पड़ी हैं। किन्तु ऐसे मिश्रविवाह के नियम भी हमारे स्मृतिकारों ने विस्तार से बनाए हैं। इसलिए हमारे देश की आज की स्थिति को देखकर हरएक को यह साफ मालूम होना चाहिए कि सर्व-धर्म-समभाव से सहजता से निकलने वाला 'सर्व-धर्म-मम-भाव' स्वीकार करने में कोई हर्ज नहीं है।

आज इस पद तक जाने की जिनकी हिम्मत नहीं है, वे कम-से-कम हिन्दू-समाज के अंदर जो जातिभेद और वर्णभेद हैं, उनको एक ओर रखकर मिश्रविवाह करने कराने के लिए तैयार हो जायं, तो भी बहुत कुछ काम हो जायेगा। छुआछूत के कारण और रोटी-बेटी व्यवहार की संकरी दृष्टि के कारण हिन्दू-समाज के तो हमने टुकड़े-टुकड़े कर ही डाले हैं। इन टुकड़ों को मिलाकर सच्चे मानव-धर्म का प्राण हम इस हिन्दू कलेवर में फूंकने में कामयाब हो जायं तो हिन्दू समाज समर्थ होकर आत्मरक्षा और दुनिया की सेवा के लिए तैयार हो जायेगा। *(मार्च, 1954)*

सर्व-धर्म-मम-भाव

प्रकृति ने हमें अनेक इन्द्रियां दी हैं। उनके द्वारा हम तरह-तरह के आनंद ले सकते हैं। मिष्ठान्न भोजन में षड्रस की अभिरुचि तो हम पाते ही हैं। लेकिन खाते समय थाले के इर्द-गिर्द रंगबिरंगी रंगवल्ली खींचते हैं, फूलदानी में फूलों के गुच्छे रखते हैं, अगरबत्ती की सुगंधि का भी उसी समय सेवन करते हैं। महाराष्ट्र का तो रिवाज है कि बड़े-बड़े भोज में अच्छे-अच्छे गायक गान-तान भी चलाते हैं। एक ही साथ अनेक प्रकार के आनंद लेना मनुष्य को भाता है। ऐसे आनंद में सम्मिलित होने के लिए अनेक इष्टमित्रों को बुलाकर हम अपना आनंद अनेक गुना बढ़ाते हैं।

इस आनंदोत्सव में जो परस्पर भिन्न आनंद हम लेते हैं, वे परस्पर मारक नहीं, पोषक होते हैं।

एक ही आदमी को किसी का पुत्र, किसी का पिता, किसी का पति और किसी का सखा, किसी का साथी तो किसी का प्रतिस्पर्धी, ऐसी अनेक भूमिकाएं लेनी पड़ती हैं। इन सब भूमिकाओं के होने से ही जीवन समृद्ध होता है। हम नहीं कहते हैं कि एक आदमी एक ही भूमिका ले। एक आदमी की अनेक भूमिकाएं हो सकती हैं। आयु के बढ़ते ही भूमिकाएं बदलती हैं। खूबी यह कि प्रौढ़ावस्था में प्रौढ़ भूमिका आ आस्वाद लेते हुए बचपन की बाल्योचित भूमिका को भी याद रखते हैं और कभी-कभी उसका भी लुत्फ लेते हैं। विविधता हमारे जीवन का सार-सर्वस्व है।

श्रीकृष्ण को भगवान या परब्रह्म जानते हुए, अर्जुन उन्हें सखा मानते थे और उनका उपहास भी करते थे। दास्य भक्ति का आनंद लेते हुए हनुमान श्री रामचंद्र से कहते हैं : जैसी मेरी भूमिका बदलती है, वेसा मेरा-आपका संबंध भी बदलता है। देह-बुद्धि

प्रधान होने पर मैं आपका दास हूं। जीव-बुद्धि जब जाग्रत होती है, तब मैं आपका एक अंश हूं, मानो अग्नि का स्फुलिंग। लेकिन जब मैं आत्मबुद्धि पर आरूढ़ होता हूं, तब मैं स्वयं रामचंद्र ही हूं, क्योंकि उस समय अभेद-बुद्धि ही रहती है।

रूढ़ इस्लाम कहता है कि भगवान मालिक है। हम उनके गुलाम, सेवक हैं भगवान को पिता बनाना गलत है। विश्वासी ईसाई-धर्म कहता है कि भगवान हमारे पिता हैं, हम उनके पुत्र हैं। रामकृष्ण परमहंस जैसे परमभक्त भगवान को माता कहते हैं। गोपियां कृष्ण भगवान को अपना प्रियकार मानती थीं, जब कि सूफी तत्त्वज्ञानी भगवान को अपनी प्रिया या कातिल माशूक मानते हैं। तुलसीदास ने भगवान से विनय करते हुए कहा : ''**तोहि मोहि नाते अनेक, मानिए जो भावै, ज्यों-त्यों तुलसी कृपालु चरण-शरण पावै।**'' प्रखर अद्वैतवादी शंकराचार्य ने गाया : ''**सत्यपि भेदापगमे नाथ तवाहं न मामकीनस्त्वम्। सामुद्रो हि सा तरङ्गः क्वचन समुद्रो न तारङ्गः॥**'' सूर्यबिम्ब में परमात्मा का दर्शन करते हुए उपासक ऋषि कहते हैं : ''**यो असौ पुरुषः सोऽहम् असिम।**'' फिर भी वह उसी भगवान की प्रार्थना करता है : ''**पूषन् एकर्षे यम सूर्य प्राजापत्य व्यूह रश्मीन् समूह तेजो। यत् ते रूपं कल्याणतमम् तत् ते पशमि।**''

भारतवर्ष ने शुरू में '**साधनानाम् अनेकता**' का सिद्धांत मान्य किया है। हर एक साधक अपना स्वभाव, अपनी दृष्टि और अपनी अभिरुचि के अनुसार अपना उपासना-क्रम पसंद करता है। दूसरे कोई उसमें बाधा नहीं डालते।

यह भी नहीं कि जो पिता की उपासना हो, वही उसका पुत्र चलाये। ऐसा भी पाया गया है कि गुरु की उपासना अलग और शिष्य की अलग। जनार्दन स्वामी दत्तात्रेय की उपासना करते थे। उनके शिष्य एकनाथ कृष्ण के भक्त थे। शंकराचार्य शिवभक्त थे। उनकी माता का आराध्य देवता श्रीकृष्ण या विष्णु था।

हमारे जमाने में रामकृष्ण परमहंस ने क्रमशः सब धर्मों की उपासना आजमाकर देखी और उसके आधार पर कहने लगे कि सब धर्म सही हैं, क्योंकि मैंने सबका जाति तजुर्बा किया है।

ऐसा है भारतवर्ष का समझदार उदार वायुमंडल। उधर दुनिया में इससे विपरीत परिस्थिति पायी जाती है। *कई धर्मों के आग्रही उपासक कहते हैं : हमारा ही धर्म सही है, बाकी के सब धर्म झूठ हैं, पाप की तरफ ले जाने वाले हैं।*

भिन्न-भिन्न धर्मों के लोग आपस में झगड़ करें और खून बहायें, यह तो दर्दनाक बात है ही। लेकिन एक ही धर्म की भिन्न-भिन्न शाखाएं आपस में लड़ती रही हैं। हम जो अर्थ करते हैं, वही सही है, ऐसा कहकर वे संतोष नहीं मानते। यह भी कहते हैं कि जो भिन्न अर्थ करते हैं, वे महापाप करते हैं, वे ऐसे पाप को छोड़ने को तैयार न हों तो उनको मार डालना चाहिए। क्योंकि वे जितने क्षण जीते हैं, पाप की जिन्दगी बसर करते हैं। ऐसे पाप से उन्हें मुक्त करने का एक ही तरीका है कि उन्हें जीवन से ही मुक्त किया जाय।

ईसाई लोगों ने अपने ही धर्म के भिन्न मतावलम्बियों को इन्क्वीजिशन के धर्म-न्यायालय के सामने खड़ा कर जिन्दा जला देने की सजा की है। मुसलमानों ने कई सूफियों को संगसार करके यानी पत्थर मार-मारकर खत्म किया है। हमारे यहां भी कभी-कभी शैव, वैष्णव इसी तरह लड़े हैं। गोआ में ईसाइयों ने धर्म के नाम पर जो अत्याचार किये हैं, उसे पढ़कर रोंगटे खड़े होते हैं और लज्जा से सिर झुक जाता है।

आदमी ने इस तरह मतभेद के कारण सदियों तक खूँरेजी चलाने के बाद सहिष्णुता को स्वीकार किया।

यह सहिष्णुता क्या चीज है? जिस चीज को हम बुरा मनते हैं, अधर्म मानते हैं, उसे मिटाने का, दबाने का हमें कोई अधिकार नहीं है, क्योंकि दूसरे लोग उसे बुरा नहीं मानते। उनको भी वेसा मानने का अधिकार है। इसलिए हम जिसे पाप समझते हैं, गुनाह समझते हैं, उसे भी बरदाश्त करें। (इसी सहिष्णुता के कल के सिद्धांत का आज का नाम है—Co-existance.)

अगर आज की दुनिया इस Co-existance—सहिष्णुता-तक आये तो गनीमत है। लेकिन इतना बस नहीं है। हम सहानुभूति और हार्दिक उदारता से औरों के दृष्टिकोण को क्यों न समझें और उसकी खूबी की तरफ भी क्यों न ध्यान दें? किसी को दोष देना और उसकी हस्ती बरदाश्त करना आज की दुनिया के लिए भले ही बड़ी बात हो, लेकिन जिसके पास बुद्धि है, हृदय है, हर बात के अलग-अलग पहलू समझने की शक्ति है, वह एक साथ अनेक दृष्टियां क्यों न समझ ले?

अनुभव कहता है कि हरएक धर्म के पीछे दैवी उदात्त प्रेरणा है। वह यह भी कहता है कि हर एक धर्म के विकास में मनुष्य ने अपनी ओर से अपनी मर्यादाएं, अपनी एकांगिता और वहन भी बढ़ा दिये हैं। व्यक्ति-प्रामाण्य ग्रंथ-प्रामाण्य और परमपरा-प्रामाण्य के बंधनों में फंसकर मनुष्य ने बुद्धि-प्रामाण्य और अनुभव-प्रामाण्य को भी गौण किया। धर्मशास्त्र को कानूनी रूप दे दिया, धर्माचार्य गुरु का पवित्र स्थान छोड़कर न्यायाधीश का बाजारू स्थान ले बैठे और संकुचितता को ही धर्मनिष्ठता मानने लगे। *...क्रमशः अगले अंक में*

गांधी बनाम नेहरू बनाम पटेल

आज देश में निजी स्वार्थों की पूर्ति के लिए हमारे तीन प्रमुख नेताओं महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू और सरदार वल्लभ भाई पटेल में वैचारिक मतभदों को हवा देकर 'मनभेद' फैलाने का कार्य किया जा रहा है।

यह बात भी उल्लेखनीय है कि सरदार पटेल के 27 महत्वपूर्ण भाषणों में कहीं पर भी देश के क्रांतिकारियों का जिक्र नहीं आया है। वे बार-बार आजादी के लिए गांधीजी की तपस्या को श्रेय देते हैं। आम जनमानस में यह धारणा स्थापित कर दी गयी है कि सरदार पटेल, महात्मा गांधी और जवाहरलाल नेहरू तीनों में बहुत गंभीर मतभेद थे। ऐसी स्थिति को साफ करने के उद्देश्य से स्वतंत्रता-प्राप्ति के आस-पास के वर्षों में देश के विभिन्न स्थानों पर सरदार पटेल के महत्त्वपूर्ण भाषाणों के अंश यहां प्रस्तुत हैं, जो स्वतः स्पष्ट है। **–कार्य. सं.**

''अपने लीडर महात्मा गांधी के पास से मुल्क की सेवा का धर्म मैंने सीख लिया है, इसमें इस प्रकार की बेवफाई आ जाए तो, मुझे अपघात आत्महत्या कर लेना चाहिए।'' –सरदार पटेल

गुजरात-महाराष्ट्र के अभिनंदोत्सव में *सरदार पटेल कहते हैं,* 'अकेले गांधीजी की तपश्चर्या, उनकी नैतिक शक्ति और आत्मशक्ति से हमारे गुलाम देश की इज्जत बढ़ गई। उनके तपोबल से हमारे देश का नैतिक स्तर ऊंचा उठ गया।' महात्मा गांधी के बारे में वे कहते हैं, 'हमारा सबसे बड़ा नेता था, जिसने दुनिया में हमारी इज्जत बढ़ाई, वह महात्मा गांधी थे।'

15 अगस्त 1947 को जब भारत स्वाधीन हुआ, तब भारत में 9 प्रांतों के अतिरिक्त 584 रियासतें थीं। इन 584 रियासतों में केवल हैदराबाद, कश्मीर और मैसूर यही तीन रियासतें थीं, जो आकार और आबादी के लिहाज से पृथक राज्यों का रूप धारण कर सकती थीं। अधिकांश रियासतें बहुत छोटी थीं और 202 रियासतें ऐसी थीं, जिनका क्षेत्रफल 10 वर्गमील से अधिक नहीं था। रियासतों का यह महकमा भारत के प्रथम उपप्रधानमंत्री श्री सरदार वल्लभभाई पटेल को सौंपा गया और दो वर्षों के भीतर ही उन्होंने संपूर्ण भारत को एक बना दिया।

सरदार पटेल शांतिप्रिय व्यक्ति थे। लेकिन जनता के चित्त में उनकी छवि कुछ और ही बनाई गई है। *वे तो कहते हैं,* 'मैं तो हमेशा शांति चाहता हूं। अगर शांति नहीं चाहता तो जिंदगीभर गांधीजी के पास कैसे रहता।' महात्मा गांधी का गुणगान करते हुए वे कहते हैं, 'दुनिया में आखिर सबसे बड़ी चीज क्या है? धन कोई बड़ी चीज नहीं है, न सत्ता कोई बड़ी चीज है। दुनिया में सबसे बड़ी चीज इज्जत या कीर्ति है। आखिर महात्मा गांधी के पास और क्या चीज थी? उनके पास न कोई राजगद्दी थी, न उनके पास शमशेर थी, न उनके पास धन था। लेकिन उनके त्याग और उनके चरित्र की जो प्रतिष्ठा थी, वह और किसी के पास नहीं है। वही हमारे हिंदुस्तान की संस्कृति है।'

यद्यपि सरदार पटेल एकाधिक बार यह स्वीकार कर चुके थे कि हमें जमाने के हिसाब से चलना चाहिए। गांधीजी का विचार बहुत अच्छा है, परंतु हमें दुनिया के सामने टिके रहने के लिए सैन्य साजोसामान की जरूरत है। आजादी आंदोलन का विश्लेषण करते हुए *सरदार पटेल* कहते हैं, 'सच्चा स्वराज हमें पैदा करना हो, तो गांधीजी ने जो रास्ता हमें बताया था, शुरू से वही रास्ता हमें पकड़ना होगा। हमने जब हिंदुस्तान में स्वतंत्रता के लिए युद्ध शुरू किया, तब वह दो तारीकों से किया। एक तो परदेशी सल्तनत को इधर से हटाना। उसे हटाने के लिए गांधीजी के पास एक अद्‌भुत शस्त्र था असहयोग और सत्याग्रह। उन्होंने सत्य और अहिंसा द्वारा विदेशी सत्ता को इधर से हटाने के लिए तपस्या शुरू की।... एक महान व्यक्ति की तपस्या से ही परदेसी सल्तनत यहां से हट गई।'

भारत की आजादी के लिए सरदार पटेल एकमात्र श्रेय गांधी जी को देते हैं। दिल्ली प्रदर्शनी के उद्‌घाटन अवसर पर *उन्होंने कहा,* 'अगर स्वराज्य के लिए किसी ने कष्ट उठाया तो गांधी जी ने उठाया और उनकी कृपा से और उनके आशीर्वाद से हमारे मुल्क का इतना बड़ा यह काम पूरा हुआ।'

वे आगे कहते हैं, 'यदि हमें सच्चा स्वराज चाहिए, तो हमें गांधीजी की बतायी हुई समाज-रचना करना पड़ेगा। इसलिए मैं पुकार-पुकार कर सब जगह कह रहा हूं कि आप गलत रास्ते पर चल रहे हैं। जिस प्रकार हम आज चल रहे है, इसी तरह से आगे भी चलते रहेंगे, तो कुछ दिनों के बाद लोग कहने लगेंगे कि इससे तो अंग्रेजों का राज अच्छा था। तब कम-से-कम खाना तो मिलता था'

आजादी के एक साल बाद ही सरदार पटेल ने इसे *नकली आजादी* बताया। 'गांधी जी ने हमें बताया था कि हमारा स्वराज्य तो सूत्र के तांत से जुड़ा हुआ है। हमें चरखा चलाना चाहिए, यह उन्होंने कहा था। वह तो

हमने कुछ किया नहीं। अब यह स्वराज्य आया है, वह असली नहीं नकली है। असल स्वराज्य तो तभी हो सकता है जब हम सब साथ मिलकर, जितनी चीजें हमें अपने मुल्क के लिए चाहिए, वे सब अपने मुल्क में पैदा कर लें। इसके लिए हमें अपनी आदतें बदलनी होंगी। जो चीज हमें चाहिए, वह चीज अगर हमारे मुल्क में बनती हो, तो उसी को इस्तेमाल करना हमारा कर्तव्य है। सच्चे स्वराज्य की प्राप्ति के लिए हमें आज प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि 26 तारीख से या तो इसी महीने से कि हम परदेशी वस्तुओं का इस्तेमाल नहीं करेंगे।'

सरदार पटेल ने देश की इमारत को मजबूत बनाने के लिए आधारभूत उपाय बताए। गांधी जी भारत को गांवों का देश कहते थे और यही इस देश का मूल चरित्र भी है। सरदार पटेल ने भी गांवों को मजबूत बनाने की हिमायत की। देश के गुलामी में फंसने के लिए छुआछूत की भावना भी जिम्मेदार थी। इसे दूर करने के लिए गांधी जी ने कई आंदोलन चलाए। इस बारे में सरदार पटेल कहते हैं 'गांधीजी पुकार-पुकार कर कहते थे कि यदि सच्चा स्वराज्य आप लोगों को चाहिए, तो अस्पृश्यता को मिटा दीजिए। पहले हिन्दू और मुसलमानों को एक कर दो। अपनी आर्थिक स्थिति ठीक करनी हों तो हम अपना कपड़ा आप बनाएं। पहनने का जो कपड़ा हमारे गांव में बने वही हम पहनें।... हमारे मुल्क में एक भाषा होनी चाहिए अंग्रेजी-वंग्रेजी छोड़ देनी चाहिए। राष्ट्रभाषा एक होनी चाहिए। इन चारों इमारतों पर हिंदुस्तान का स्वराज्य बनाने की गांधीजी ने कोशिश की और वह कोशिश उन्होंने मरते दम तक नहीं छोड़ी थी। *मैं उनका साक्षी हूं। मरने से सिर्फ पांच मिनट पहले एक घंटे तक मेरी उनसे बातचीत हुई और मैं जब चला गया तो तुरंत एक आदमी आया और उसने बताया कि एक पागल आदमी ने फाइरिंग किया तो बापू मर गए।'*

सरदार पटेल ने कभी अपने लिए संपत्ति जोड़ने का काम नहीं किया। उनके ऊपर पूंजिपतियों का साथ देने के अनेक आक्षेप लगाए गए। तब *सरदार पटेल* को कहना पड़ा 'जब से मैंने गांधीजी का साथ दिया, और आज इस बात को बहुत साल हो गए, तभी से मैंने फैसला किया था कि यदि पब्लिक लाइफ में काम करना हो, अपनी मिल्कियत नहीं रखना चाहिए। सोचिए जरा तब से आज तक मैंने कोई चीज नहीं रखी। न मेरा कोई बैंक अकाउंट है, न मेरे पास कोई अपना मकान है। मैं यह कुछ रखना ही नहीं चाहता हूं। अगर मैं रखूं तो मैं इसे पाप समझता हूं। मुझे कोई सोशलिज्म का पाठ सिखाए तो फिर उसे सीखना पड़ेगा कि पब्लिक लाईफ किस तरह से चलानी है।'

राजनीति के बारे में सरदार पटेल कहते हैं 'पोलिटिक्स का क्षेत्र बड़ा मैला है। यह मैला काम है, गंदा काम है।.... म्युनिसिपैलिटी में जितनी गंदगी है, उससे कहीं ज्यादा गंदगी पोलिटिक्स में है। म्युनिसिपैलिटी में तो गटर्स ही साफ करने की है, लेकिन राष्ट्रीय क्षेत्र के भीतर जो गटर्स हैं, वे बहुत बड़े डर की चीज है। उनको साफ करना बहुत ही कठिन है। जो अपना दिल साफ न रखें, वह राज्य का बोझ नहीं उठा सकता।'

पं. नेहरू और सरदार पटेल

आम जनमानस और राजनीतिज्ञों में सरदार पटेल और पं. जवाहर लाल नेहरू को एक-दूसरे का विरोधी बताकर अपना स्वार्थ सिद्ध करने की विकृत मानसिकता बन गई है। जबकि दोनों का लक्ष्य राष्ट्र निर्माण था। पं. नेहरू अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत के लिए सहायता हासिल कर रहे थे तो सरदार पटेल देश की भीतरी एकता को मजबूत बनाने में लगे हुए थे। शिवाजी पार्क मुंबई में एक सभा को संबोधित करते हुए सरदार पटेल ने कहा, 'हमारे प्राइम मिनिस्टर पर जो भारी बोझ है, उनके हिसाब से मेरा बोझ कुछ भी नहीं है। मैंने तो कहा था कि इन चार-छः महीनों में ही हमारे प्राइम मिनिस्टर की उम्र दस साल बढ़ गई है। मैं जब उनका चेहरा देखता हूं तो मुझे दर्द होता है कि कितना बड़ा भार उनके सिर पर है।'

इम्पीरियल होटल दिल्ली में *सरदार पटेल ने पं. नेहरू के प्रति अपने विचारों को कुछ इस प्रकार व्यक्त किया।* 'आप यह न समझिए कि यह गवर्नमेंट कैपिटलिस्ट की है, हालांकि बार-बार आप लोगों को ऐसी बातें कहीं जाती हैं।.. आज हमारा जो लीडर हमारे प्रधानमंत्री हैं, वही ट्रेड यूनियन कांग्रेस के पहले प्रेसिडेंट थे, उन्होंने उसकी बुनियाद डाली थी। उनसे बढ़कर मजदूर का हित चाहने वाला कोई और मैंने नहीं देखा है। अब जब यह बात लोगों के ख्याल में आती है, तब कहा जाता है कि उनका प्रधानमंत्री का तो कुछ चलता नहीं, वहां तो गवर्नमेंट में दो पार्टियां हैं। छोटे दिल के और पागल लोग ऐसी-ऐसी बातें करते हैं। *ये समझते हैं कि हम ऐसे बेवकूफ हैं कि मुल्क की आजादी के लिए जिंदगी भर साथ रहने के बाद अब हम आपस में इस प्रकार की लड़ाई कर लेंगे और अपनी दो पार्टियां बनाएंगे। यदि मैं अपने लीडर का साथ न दे सकूं और उनका पैर मजबूत न कर सकूं तो मैं एक मिनट भी गवर्नमेंट में न रहूंगा। यह मेरा काम नहीं है। इस तरह की बेवफाई करना मेरे चरित्र में नहीं है। क्योंकि अपने लीडर महात्मा गांधी के पास से मुल्क की सेवा का धर्म मैंने सीख लिया है, उसमें इस प्रकार की बेवफाई आ जाए तो, मुझे अपघात आत्महत्या कर लेना चाहिए।* लेकिन बार-बार छोटे दिल के आदमी ऐसी बातें करते हैं और भोले-भाले आदमी उनकी बात मान भी लेते हैं। हां कभी-कभी तो किसी बात के बारे में हम एक दूसरे के साथ मशविरा करते हैं, नहीं तो ज्वाइंट रिस्पोंसिबिलिटी कैसी होती? डेमोक्रेसी में मशविरा ही तो किया जाता है। *हम सब आपस में अलग-अलग राय रखते हैं और हर सवाल पर एक दूसरे के साथ मशविरा करते हैं।* नहीं तो ज्वाइंट रिस्पोंसिबिलिटी कैसे चले? ऐसा न हो तो यहां जो पुराना राज चलता था, जिसे आटोक्रेसी निरंकुशता राज कहते हैं, वैसा ही चले, तो यह ख्याल गलत है।'

जहां मतभेद वहां विकास की गुंजाइश हमेश बनी रहेगी। इन्हीं मतभेदों का फायदा 'मनभेद' बढ़ाने के लिए किया जाता है। *आजादी के बाद हमने एक ही काम किया है। हमारे आजादी के सिपाहियों को उनकी विचारधारा के आधार पर एक-दूसरे के खिलाफ खड़ा कर भोलीभाली जनता में भ्रम* पैदा कर दिया। सरदार पटेल ने जवाहरलाल नेहरू को सर्वाधिक पारदर्शी व्यक्ति कहा। ❑

स्मृति-शेष : 4 जनवरी, कुमारप्पा-जयंती

गांधी अर्थनीति की बुनियाद

❑ जे. सी. कुमारप्पा

अगर कोई यह पूछे कि गांधी का जो अर्थशास्त्र है, उसके क्या उसूल हैं, तो हम यही कहेंगे कि ऐसी कोई चीज ही नहीं है। गांधीजी के लिए तो अर्थशास्त्र जीवन के एक तौर-तरीके का हिस्सा है। अर्थशास्त्र पर लिखी जाने वाली किताबों में जो आम कायदे-कानून बताये जाते हैं, वे किन्हीं उसूलों के मातहत होते हैं। लेकिन गांधी अर्थ-विचार में ऐसा भी नहीं होता। सिर्फ दो जीवन के उसूल हैं, जिनके मातहत गांधीजी के आर्थिक, सामाजिक, राजकीय और दूसरे सभी ख्यालात हें वे हैं सत्य और अहिंसा। इन दो कसौटियों पर जो चीज खरी नहीं उतरती, उसे गांधीवादी नहीं कहा जा सकता। अगर चीजों की कोई सूरत ऐसी बन जाती है कि उससे हिंसा पैदा हो या उसमें झूठ की जरूरत पड़ जाय, तो हम उसे गैर-गांधीवादी कह सकते हैं।

इन दो उसूलों को हम लें और जीवन के हर पहलू में इन्हें लागू कर यह देखें कि कहाँ सत्य है, कहाँ अहिंसा पैदा की जा सकती हैं। अगर ये मकसद हासिल न हों, तो उन रास्तों को छोड़ देना चाहिए।

अगर हम इन्सानी खानदान को लें, तो अपने नजरियों के मुताबिक हम पाँच अलग-अलग जातियों में बाँट सकते हैं। यह चीज हमें जानवरों की मामूली जिन्दगी में भी मिलती हैं। मिसाल के तौर पर चीते को लीजिए, जो सबसे ज्यादा हिंसक और बेरहम है। यही अपनी माली जिन्दगी के लिए क्या करता है? अपना खाना कैसे पाता है? जानवरों को या जो मिल जाय, उसे मारकर खाता रहता है। चीता कुछ पैदा नहीं करता, पैदावार के काम में रत्तीभर मदद नहीं पहुंचाता, लेकिन बगैर पैदा किये सिर्फ खाता है। यह नमूना है बिना पैदावार किये खर्च करने का। और चीता रहता कहाँ है? पहाड़ियों में, गुफाओं में, खन्दकों में। इसलिए जहाँ तक चीते के खाने का वास्ता है, वह आदमखोर है और इसके रहन-सहनका ढंग लुटेरा है।

बन्दर को लीजिए। यह अपनी खुराक कैसे पाता है? इधर-उधर यह फल तोड़ा, यह पत्ती ली, यह लिया, वह लिया, यानी लूट मचाता है। बन्दर अपनी खुराक देने वाले साधन को खतम नहीं कर डालता है, लेकिन जो मयस्सर होता है, उसे ले लेता है। चीते और बन्दर की मिसालों से दो रास्ते साफ समझ में आ जाते हैं। दोनों ही बिना कुछ पैदा किये खर्च करते हैं और जो सामने पड़ गया, उस पर गुजर करते हैं। जरा दूर तक देखें, तो पता चलेगा कि दोनों की एक-सी हालत है, लेकिन जब यह सवाल आता है कि हिंसा कितनी हो रही है, तो दोनों में फर्क मालूम पड़ता है। चीता बन्दर के मुकाबले कहीं ज्यादा हिंसक है। बन्दर अपनी खुराक के साधन तो तबाह नहीं कर डालता। एक आदमखोर है, दूसरा लुटेरा। दोनों खुदखोर हैं। अपना फर्ज निभाने का उनमें कोई माद्दा ही नहीं है। वे केवल अपनी भूख, लालच और खुदखोरी के तौर पर—जिनकी बुनियाद हक या अधिकार पर है—सोच सकते हैं।

अब हम तीसरी हालत पर आते हैं, जिसमें फर्ज और हक का संतुलन है। इसको हम कारोबारी सूरत कह सकते हैं। घरों के अन्दर छोटी-छोटी चिड़ियों के घोसलों को देखिये। अपनी चोंच से वह तिनके, फूस, रूई वगैरह जमा करके घोंसला बनाकर रहती हैं। वह घोंसला ऐसी जगह बनाती हैं, जहाँ बिल्ली न पहुँच सके। मेहनत और दूरंदेशी से तैयार की हुई पनाहगाह में उन्हें मजा आता है। यह हुआ पैदा करके खर्च करना। चिड़िया निजी मालिकी का हक बरतती है। क्योंकि अगर दूसरी चिड़िया आये, तो वह चोंच मारकर उसे भगा देगी। इसमें हक और फर्ज हुए हैं।

चौथी सूरत गिरोहबन्दी की है, जिसमें शहद की मक्खी आती है। वह शहद किस तरह जमा करती है? उसे वह लाकर छत्ते में भर देती है। वह यह नहीं करती कि छत्ते में कोई खास छेद मेरा है। सारे गिरोह के फायदे के लिए वह जमा करती है। जब एक मक्खी शहद लाती है, तो छत्ते में लाकर उसे रख देती है और सब मक्खियों के इस्तेमाल के लिए उसे छोड़ देती है। वह अपने निजी खर्च के लिए नहीं, बल्कि सबके खर्च के लिए पैदा करती हैं। सारी मक्खियां एक खानदान की तरह रहती हैं। इसमें हक के जज्बे के बजाय फर्ज का जज्बा ज्यादा तगड़ा है। पैदावार खर्च से ज्यादा है और बचत सबके काम आती है। इसके बाद पाँचवीं सूरत है, हमने ऊपर घोंसले बनाने वाली चिड़िया की चर्चा की है। मान लीजिए, उसको एक बच्चा हुआ। सुबह को वह निकल पड़ी। अनाज के दाने वगैरह जो मिले, जमा कर लाती है और बच्चे को खिलाती है। वह यह नहीं कहती कि चीज मेरी लायी हुई है, इसलिए उसे निगल जाने का मुझे ही हक है। वह उसे बच्चे के पास ले जाकर उसे खुद खिलाती है। क्या वह यह सोचती है कि बड़ी होने पर यह मुनिया मुझ बूढ़ी माँ को खिलायेगी? नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है। वह जो देती है उसे वापस पाने का कोई ख्याल उसे नहीं होता। वह यह सब अपने फर्ज के आधार पर करती हैं। इसको हम माँ की अर्थनीति या सेवा-अर्थनीति कह सकते हैं।

सरकार और मूल्य नियंत्रण

वस्तुओं की कीमत निरंतर बढ़ने से रोकने के लिए सरकार ने कुछ योजनाएं बनाई हैं। ये सब योजनाएं निर्धारित करते समय सरकार के सामने केंद्रित उत्पादन के बड़े-बड़े कारखाने थे यह स्पष्ट है। यदि इन कारखानों के उत्पादन के सामने खेती तथा अन्य ग्राम उद्योगों का उत्पादन रखें तो कारखानों का उत्पादन दरिया में खसखस जितना ही साबित होगा। इसलिए यदि सचमुच उत्पादन बढ़ाना हो तो खेती और

ग्रामोद्योग में थोड़ा-सा संशोधन करने से एकदम बहुत फर्क पड़ सकता है। परंतु उत्पादन का यह पहलू एकदम भुला दिया गया दिखाई देता है।

यह हमेशा ख्याल में रखना चाहिए कि मौजूदा भावों की वृद्धि के लिए सरकार की फिजूल खर्ची बहुत कुछ हद तक जिम्मेदार है और यह फिजूल खर्ची बहुत हद तक सरकारी आय और व्यय के झूठे मानदंड़ों के कारण निर्माण हुई है। इसलिए मौजूदा हालत में उपाय यही हो सकता है कि पैसे का मूल्य बढ़ा दिया जाए और किसी एक व्यक्ति विशेष के हाथों में पैसा इकट्ठा न होने दिया जाए। रुपयों की कीमतों का फर्क निकाल देने के लिए किसी भी सरकारी महकमे का खर्च एकदम घटा देना चाहिए और ऐसा करने का सबसे आसान तरीका है लगान वसूली और खर्च की मदों का विकेंद्रीकरण कर देना। हमें स्थानीय प्रबंध करने वाली पुरानी ग्राम पंचायत जैसी संस्थाएं निर्माण करनी चाहिए। ऐसा जब तक हम नहीं करते तब महंगाई रोकने के आज हमारे सारे उपाय केवल ऊपर से मलहम पट्टी करने जैसे होंगे, रोग के मूलगामी इलाजों जैसे न होंगे।

मौजूदा हालत में ये सुधार शासन यंत्र में शायद कुछ शिथिलता निर्माण करें, पर उसे गवारा करके भी हमें ग्रामीणों को योग्य दिशा में शिक्षित कर देना चाहिए ताकि वे कुछ जिम्मेदारी उठाने के काबिल हो जाएं। सदियों की विदेशी हुकूमत के कारण हम सार्वजनिक कर्तव्यों की भावना खो बैठे हैं। वह भावना फिर से निर्माण करने के लिए शायद पचासों बरस लगें, पर यदि हमें लोगों को स्वराज्य की जिम्मेदारी उठाने योग्य बनाना है तो इतना समय हमें रूकना ही पड़ेगा।

गुड्डियों का तमाशा

प्राथमिक अवस्था में जो समाज होते हैं, वे गुड्डियों की शादियों के जलसे कराते हैं। इससे मालदार लोगों को आमोद-प्रमोद का अवसर मिल जाता है और सौदागरों का माल बिकता है। पुराने जमाने के राज्याभिषेकों का भी यही उपयोग था। उसके साथ एक गंभीर धार्मिक विधि भी होती है। यह विधि यदि उचित वृत्ति से की जाय तो हमारे हृदय में उदात्त और उन्नत भावनाएं जागृत करती है। लेकिन उसके लिए अनार्य तथा दकियानूसी आडम्बर की जरूरत नहीं है। ऐसे कपड़ों और जवाहिरात पर करोड़ों पौंड खर्च किये गये, जिनका कि आधुनिक जगत् में कोई भी उपयोग नहीं है। सरमायादारी के जमाने में ये समारोह शुरू हुए और उस ठाट-बाट को देख कर कम वैभवशाली लोग इन सरमायादारों की पूजा करने लगते थे।

हमें खेद है कि हमारे देश के जैसा स्वतंत्र गणराज्य भी साम्राज्यवादी ब्रिटेन की लीक पर चले। हमारे प्रधानमंत्री का उस समारोह में शामिल होना यही मतलब रखता है। हमको इसी से संतोष नहीं हुआ। हमारा तथाकथित नौसेना का 'खिलौना' भी राज्याभिषेक की व्यूहरचना के लिए भेजा गया था। हमारे गरीब देश को इसके लिए लाखों रुपये खर्च करने पड़े होंगे, जो हमारी हैसियत से बाहर है। जब कोई देहाती अपने घर में शादी जैसे अवसरों पर भोजन और औपचारिक समारोहों के लिए कुछ मित्रों को निमंत्रित करता है, तो हम उसे उस 'तड़कभड़क' के लिए दोष देते हैं। लेकिन नौसेना के इस प्रयास के पीछे हमें तो कोई राजनैतिक प्रयोजन या कारण भी नहीं दिखायी देता। अंग्रेजों की दृष्टि से राज्याभिषेक-समारोह का, खास कर इससे बने पैमाने पर समारोह का उपयोग व्यापारी वर्ग अपना व्यापार बढ़ाने के लिए कर लेता है। असल में एक गंभीर विधि से इस प्रकार फायदा उठाना उन्हें शोभा नहीं देता।

भारत एक गणराज्य है। इसलिए उसकी निष्ठा कुछ विशिष्ट राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक मूल्यों में तथा प्रयोजनों में होनी चाहिए। हमारे प्रधानमंत्री के वहां जाने से कौन से मूल्यों की प्रगति हुई, यह हमारी समझ से परे है। ❑

राष्ट्रीय महिला-शिविर : 20-22 फरवरी, 2015 : जलगांव

सर्व सेवा संघ द्वारा माता कस्तूरबा गांधी की पुण्यतिथि पर 20 से 22 फरवरी, 2015 तक जलगांव (महाराष्ट्र) के महात्मा गांधी शोध संस्थान में राष्ट्रीय महिला शिविर का आयोजन किया है। इस शिविर में देशभर की महिला सर्वोदय कार्यकता, सर्वोदय परिवारों की सक्रिय महिलाएं तथा गांधी-विचार से जुड़ीं अन्य बहनें शामिल होंगी।

इस शिविर का उद्देश्य महिलाओं की दक्षता और वैचारिक आधार को विकसित करना तथा सर्वोदय आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाना है। शिविर को आदरणीय राधाबहन भट्ट, डॉ. रामजी सिंह सहित सर्वोदय के वरिष्ठ चिन्तकों का मार्गदर्शन मिलेगा।

गांधी शोध संस्थान, गांधी विचार की एक अनूठी संस्था है। आदरणीय भँवरलाल जैन के प्रयत्नों से यह एक 'तीर्थ' हो गया है। अब तो इसका नाम भी 'गांधीतीर्थ' हो गया। इस तीर्थ का पावन स्पर्श भी हम सबको मिलेगा।

जलगांव, महाराष्ट्र के भुसावल एवं मुम्बई रेललाइन पर अवस्थित है। देश के सभी प्रमुख भागों से यहां आने के लिए सीधी गाड़ियां हैं। जो गाड़ियां जलगांव नहीं रुकतीं, ऐसी गाड़ियों से आने वाली बहनें भुसावल स्टेशन पर उतरें। भुसावल से जलगांव की दूरी मात्र 25 किमी है।

शिविरार्थियों को 19 फरवरी की शाम तक जलगांव पहुंचना है। शिविर 22 फरवरी की शाम 5 बजे तक चलेगा। शिविर में आने वाली बहनें समय से रेल आरक्षण करवा लें।

आपसे निवेदन है कि आपके प्रदेश से उक्त भूमिका वाली बहनों को शिविर में भेजें। उनके नाम, पते और फोन नंबर हमें भी भेजें ताकि हम भी उनसे संपर्क कर सकें। ऐसी महिलाओं को प्राथमिकता दें, जिनसे भविष्य में सक्रिय भूमिका निभाने की अपेक्षा है।

शिविर की तारीख : 20-21-22 फरवरी, 2015 (शुक्रवार, शनिवार, रविवार)

शिविर स्थल : गांधी शोध संस्थान, गांधीतीर्थ, जैन हिल्स, जलगांव-425001 (महाराष्ट्र), फोन : 0257-2264939

आवश्यक जानकारी हेतु आप सर्व सेवा संघ, महादेव भाई भवन, सेवाग्राम-442102, वर्धा (महाराष्ट्र), फोन : 07152-284061, ई-मेल : sarvasevasangha@hotmail.com पर संपर्क कर सकते हैं।

शोभा शिराढोणकर, मंत्री **महादेव विद्रोही, अध्यक्ष**

गांधी की ओर लौटना होगा

❑ जयप्रकाश नारायण

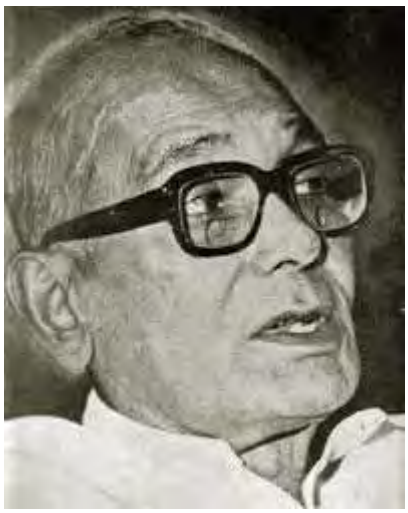

यदि लोकशाही अक्षम सिद्ध होती है और हिंसा से भी कोई समाधान नहीं निकलता है तो फिर रास्ता क्या है? रास्ता पाने के लिए हमें गांधीजी की ओर लौटना होगा। तब हम लोग देखेंगे कि गांधीजी पहले से ही हिंसा की व्यर्थता तथा लोकतांत्रिक राज्य की स्वभावगत सीमाओं से परिचित थे। अन्य राष्ट्रीय नेता जहां राष्ट्र-निर्माण के कार्यों के कार्यों की सफलता के लिए केवल राज्य-शक्ति पर ही भरोसा करते थे, वहां गांधीजी के दिमाग में यह बात स्पष्ट हो चुकी थी कि उनके सपनों का भारत, और इसलिए तत्कालीन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के भी सपनों का भारत बनाने के लिए राज्य ही एकमात्र औजार नहीं हो सकता। इतना निश्चित है कि राज्य के काम के महत्त्व को वे कम नहीं आंकते थे और वह समुचित एवं प्रभावकारी ढंग से कार्य करे, इसमें उनकी दिलचस्पी समाप्त नहीं हो गयी थी। वास्तव में वे इसी बात के लिए चिन्तित थे कि राज्य यथासम्भव सर्वोत्तम लोगों के हाथों में रहे और वह उचित नीतियो, कार्यक्रमों एवं योजनाओं का अनुसरण करे। फिर भी उनको यह स्पष्ट दीखता था कि चाहे कितनी ही अच्छी नीतियां हों और कितने ही अच्छे लोगों के हाथों में शासन-सूत्र हो, राज्य स्वतः अभीष्ट लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सकता।

इसलिए उनकी योजना राज्य-शक्ति के साथ-साथ लोकशक्ति के निर्माण की थी। तदनुसार वे स्वयंसेवी कार्यकर्ताओं की एक बड़ी सेना लेकर जनता की सेवा करने, लोगों को शिक्षित एवं परिवर्तित करने, उन्हें संगठित करने तथा स्वावलम्बी बनाने और सामाजिक परिवर्तन एवं पुनर्निर्माण की प्रक्रिया में उन्हें प्रयत्क्ष रूप से शामिल करने के उद्देश्य से जनता के बीच वापस जाने की तैयारी कर रहे थे। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए वे पहले की तरह ही सेवा, रचनात्मक कार्य, सौम्य पद्धति से विचार-परिवर्तन तथा आवश्यकतानुसार अहिंसक असहयोग या प्रतिकार का साधन अपनाने वाले थे।

गांधीजी अपनी योजना कार्यान्वित करने के लिए जीवित नहीं रहे और उनके जाने के बाद उनके तत्कालीन सहयोगियों ने, इस भ्रम में पड़कर कि हाथ में आयी हुई राजनीतिक सत्ता के सहारे ही देश की समस्या को हल करने में वे समर्थ हो जायेंगे उनहे द्वारा दिखाये गये मार्ग पर दुबारा विचार तक नहीं किया। यदि उन्होंने वैसा किया होता और, जैसा कि गांधीजी चाहते थे, राज्य और जनता के बीच अपनी शक्तियों को विभाजित किया होता, तो स्वतंत्रता के बाद के भारत का इतिहास बहुत भिन्न होता। *मैं समझता हूं, उनकी कठिनाई यह थी कि गांधीजी द्वारा बताया गया मार्ग परम्परागत मार्ग से मूलतः इतना भिन्न था कि वह उनके लिए कोई अर्थ नहीं रखता था और न वह उन्हें रुचता ही था। सफल क्रान्तिकारियों द्वारा सत्ता से अलग रहने तथा जनता के स्वैच्छिक संगठन द्वारा क्रान्ति के लक्ष्यों को प्राप्त करने की कोशिश की बात कब किसने सुनी थी!*

सौभाग्य से देश में विनोबाजी के समान नेता थे, जिन्होंने कुछ ही समय बाद आगे बढ़कर गांधीजी के हाथ से गिरी हुई मशाल को उठाकर थाम लिया। यह ठीक है कि *गांधीजी जैसा चाहते थे, उस ढंग से पुराने स्वातन्त्रय-योद्धाओं की महान् सेना को अभीष्ट दिशा में गतिशील तथा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को लोक-सेवक-संघ के रूप में वे नहीं कर पाये। फिर भी वे रचनात्मक कार्यकर्ताओं को सर्व सेवा संघ के मंच पर एक साथ इकट्ठा कर सके और उन्हें, गांधीजी के पुराने रचनात्मक कार्यक्रम के अलावा, 'सौम्य पद्धति से विचार-परिवर्तन' के एक व्यापक कार्यक्रम के साथ जनता के बीच भेज सके।* उस कार्यक्रम की पहली किस्त थी भूदान, किस्त ग्रामदान और इसके बाद ग्रामस्वराज्य होगा। इस आंदोलन के क्रम में उत्पन्न खास-खास परिस्थितियों में कुछ स्थानिक सत्याग्रह भी हुए हैं। हमारे वर्तमान कार्यक्रम के सन्दर्भ में बड़े पैमाने पर सत्याग्रह करने की आवश्यकता हो सकती है जिसके लिए, मालूम होता है, परिस्थितियां परिपक्व हो रही हैं।

('आमने-सामने' से साभार)

गांधीजी के बाद चारों ओर अँधेरा छा गया। मेरा जैसा मानना है कि अगर विनोबाजी ने भूदान यज्ञ शुरू नहीं किया होता तो गांधीवाद या सर्वोदय को हम भूल जाते। गांधीजी की बातों पर से हमारा विश्वास उठ जाता। सर्वोदय का मार्ग रुक जाता, जैसा मुझे लगता है। भूदान यज्ञ के कार्यक्रम को सामने रखकर विनोबाजी ने हमें नयी जान दी है, नहीं तो रचनात्मक काम करने वाले अपने-अपने काम करते रहते। उससे देश को अवश्य कुछ लाभ होता, परंतु यह जो आशा जनता की थी कि गांधीजी के लोग देश को नया बनाने का उद्योग करेंगे, वह नहीं रहती और देश में खूनी-जंग होते। उससे दूसरा ही नतीजा निकलता।

इसलिए हमें अपने सामने जो उद्देश्य है, उसकी प्राप्ति करने का यह तरीका लेना चाहिए, अपना-अपना अहंकार और अपने वालों का अहंकार छोड़कर काम करना चाहिए। (8 मार्च, '53, चांडिल की सभा में जेपी)

स्मृति-शेष : श्रद्धांजलि

मेरे पितातुल्य चुनी काका

❑ नीता महादेव

मैं काका के साथ रहने कब आई— वर्ष तो गिनने पड़ेंगे। जीवन के 58 वर्ष में 37 वर्ष तो काका के साथ बीते। सूरत में छात्र युवा संघर्ष वाहिनी में काम करती थी। सर्वोदय और गांधी-विचार की तरफ लगाव था, पर वैचारिक स्पष्टता और परिपक्वता कम थी। गुजरात में नवनिर्माण आंदोलन खतम हुआ था। बाद में सब लोग इधर-उधर बिखर गये। मेरे मन में यह स्पष्ट हो नहीं पा रहा था कि लेफ्ट के साथ जाऊं या किसी पार्टी में? इसलिए काका के साथ रहने और समझने के लिए आयी। आयी तो आयी, कभी वापस नहीं गयी। रहने के लिए आयी तो सबने यह कहा कि काका में बहुत गुस्सा है। पर मैंने तय किया था तो रहने के लिए आ गयी।

रहने आयी उस दिन काका के पैर में चोट लगने की वजह से प्लास्टर करना पड़ा। मुझे घर के काम आते थे पर स्वतंत्र रूप से घर चलाने की आदत नहीं थी। सब काम अपने से करने का काका का आग्रह था। पर सभी कामों में मदद करते थे। कपड़े धोने, बर्तन मांजने से लेकर हर काम में।

दिन का नित्य क्रम भी बना लिया था। सुबह इशोपनिषद से शुरू करके 'भूमिपुत्र' का प्रूफ देखना, अलग-अलग विषयों को पढ़ना, बैठकों में जाना, लोगों को मिलना पूरा दिन ऐसे ही बीतता था। इन सबके साथ मुझे काका धीरज और प्रेम के साथ सर्वोदय विचार समझाते रहते थे।

सर्व सेवा संघ का अधिवेशन हो या सर्वोदय सम्मेलन। पूरे देश में लगातार परिभ्रमण होता रहता था। नया देखना, जानना और सीखना मिलता रहा। देश के बड़े-बड़े लोगों से मिलना बहुत होता था। सबसे निकट का परिचय होता रहता था। चुनीभाई की बेटी के नाते प्रेम भी बहुत मिला। वैसे काका की बेटी तो कब की बन गयी! एक साल के लिए आयी थी पर एक साल तो कब खतम हो गया, पता चला ही नहीं। और रुक गयी तो इतने साल हो गये।

पू. दादा धर्माधिकारी के साथ काका का बहुत निकट का संबंध था। अहमदाबाद में हो तो हमारे घर एक-दो बार खाने जरूर आते। दादा अवसान के थोड़े दिन पहले बनारस आये थे। उस समय दादा का आग्रह, नीता के घर जाऊंगा। और जितने दिन रहे उतने दिन हमारे घर खाना खाया।

गुजरात के मूर्धन्य कवि श्री उमाशंकर जोशी काका के बारे में कहते थे कि उनका जीवन ऐसा है कि ''लड़ो नहीं तो लड़ने वाले लाओ''। नये-नये प्रश्न उनके सामने आते रहे। काका जो प्रश्न हाथ में लेते उसको पूरा करके ही छोड़ते थे। ऐसे मुझे भी नये-नये आंदोलनों, नये-नये प्रश्नों का परिचय मिलता रहा।

काका के आंदोलन की शृंखला बहुत लंबी है। गुजरात-राजस्थान की सीमा पर रतनपुर के शराब अड्डे तथा मोटेल के विरुद्ध सफल आंदोलन, मुंबई में देवनार कतलखाना के सामने सत्याग्रह, आरक्षण आंदोलन के समय शांति कार्य, लोक उम्मीदवार का प्रयोग, उंझा चुनाव क्षेत्र और पाटडी चुनाव क्षेत्र में मतदाता शिक्षा। 1983 में आसाम के नेल्ली में चुनाव के समय हुई भयंकर हिंसा के बाद करोड़ों रुपयों का राहत और पुनर्वास। महेसाणा जिले में पीने के पानी का प्रश्न, बनासकांठा का पानी का प्रश्न, कंडला में कारगिल कंपनी द्वारा नमक बनाने के खिलाफ अभियान, कडादरा का जमीन का प्रश्न, उमरगाम बंदरगाह का प्रश्न, ग्राम स्वराज्य का अभियान, महुवा में निरमा कंपनी का सीमेंट के कारखाने के सामने आंदोलन, मीठी विरडी में अणु ऊर्जा के लिए सत्याग्रह (अभी भी चल रहा है) सभी मोर्चों पर मैं उनके साथ रही। हमारे घर से ही सभी आंदोलन चलते थे। पूरा परिवार और घर उसमें शामिल होता था।

कभी किसी प्रश्न पर हमें लगता था कि इसे छोड़ देना चाहिए, पर काका कभी छोड़ते नहीं थे। पूरा करके ही दम लेते थे।

काका के साथ 1977 में रहने आयी। मेरी शादी महादेव विद्रोही के साथ 1983 में जैसलमेर के सर्व सेवा संघ अधिवेशन में हुई। थोड़ समय हम बनारस रहे। कहने के लिए ही रहे। बाकी तो अहमदाबाद में ही रहे। महादेव को भी काका के लिए उतना ही प्रेम और आदर। हमारे बच्चों के भी प्यारे दादा। मुदिता के मन में दादा से श्रेष्ठ कोई है ही नहीं। बच्चे छोटे थे तो गीत गाकर उनको सुलाना, कहानी सुनाना, पढ़ाना, उपनिषद पाठ कराना, सभी दादा के साथ। पूर्णम को पहाड़ा सीखना, शाम को घुमाने ले जाना, क्या क्या गिनाऊं?

इतने साल साथ में रहे, कभी कोई प्रश्न पर मतभेद होता था, लेकिन साथ में बैठकर सुलझाते थे। कभी मनभेद नहीं हुआ।

परिवार कभी टूटते जाते हैं। हमारा खून का संबंध नहीं था, फिर भी परिवार बहुत अच्छी तरह से चला। स्नेह का तंतु लगातार बढ़ता गया। कभी एहसास नहीं हुआ कि हम बाप-बेटी नहीं हैं।

काका मेरे परिवार का भी ध्यान रखते थे। मेरी बहन, भाई और उनके परिवार से भी काका का उतना ही संबंध था। काका के कामों में शामिल होने का सौभाग्य मिला इसका आनंद है।

26 नवंबर को घर में ही गिर गये। हड्डी टूटने के कारण ऑपरेशन कराना →

गांधी की हत्या : क्या सच, क्या झूठ?

❑ चुनीभाई वैद्य

प्रश्न : क्या *'मी नाथूराम गोडसे बोलतोय'* नाटक पर प्रतिबंध लगाना अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर कुठाराघात नहीं है? आपको यह कदम उचित लगता है? गोडसे के अनुसार उसने जो भी किया वह धार्मिक कृत्य था। उसके पीछे एक धार्मिक विचार था। जिस प्रकार कंस का वध, शिशुपाल का वध एक धर्मानुरूप कृत्य था, उसी प्रकार गांधी का वध भी एक धर्मसम्मत कृत्य है। उक्त नाटक में भी यही विचार प्रस्तुत किया गया है। विचार का जवाब विचार से देना चाहिए। प्रतिबंध लगाकर विचार के गले को घोंटने का काम हुआ है, ऐसा नहीं लगता?

उत्तर : अंतिम बात तो पहले लें। गोडसे के नाटक पर प्रतिबंध नहीं लगाना चाहिए, उसमें व्यक्त विचारों की अभिव्यक्ति अवरुद्ध नहीं किया जाना चाहिए—जब आप ऐसा कहते हैं तब मैं पूछ सकता हूं कि गोडसे ने विचार का जवाब विचार से दिया था क्या? गोडसे को गांधीजी के विचारों को अवरुद्ध करने के लिए उनकी हत्या करने तक का अधिकार और उस अमानवीय हत्या को उचित सिद्ध करने एवं लोगों को भड़काने के लिए ही लिखे गये सरासर झूठ पर आधारित नाटक पर प्रतिबंध लगाया जाय तो मौलिक अधिकार का भंग लगे, ऐसा सोचने वाले की बुद्धि को क्या कहेंगे! गोडसे ने तो जो किया सो किया, आज उसे बदला नहीं जा सकता परंतु उसने एक विश्ववंद्य महापुरुष के जीवन का दीप बुझा दिया। उस पाप-कृत्य को धार्मिक-कृत्य तथा उसके लिए दिये जा रहे तर्कों को धार्मिक-विचार कहा जाय और साथ ही यह भी प्रचार किया जाय कि विचार का जवाब विचार से देना चाहिए तब Setan quotes scriptures शैतान शास्त्र सिखा रहा है—वाली कहावत याद आ जाती है।

अब अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा उस पर प्रतिबंध की बात। संविधान की धारा 19 (1) में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को मूलभूत स्वतंत्रता माना है। इसके साथ ही इसके दुरुपयोग को रोकने के लिए संविधान में धारा 19 (2) का प्रावधान भी किया गया है। संविधान ने विरोधी विचार को कानूनी स्वरूप दिया है। इसीलिए तो विरोधी दल के नेता को कैबिनेट मंत्री का दर्जा एवं सुविधा दी जाती है। इसके बावजूद विरोध को निर्बाध अधिकार नहीं माना गया है। उसे खास बंधनों की मर्यादा में बाँधा गया है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उपयोग करने वाला विवेक खोकर समाज को हानि पहुंचाने का व्यवहार करे तो? तो समाज एवं सरकार को हस्तक्षेप करना पड़े। समाज के हस्तक्षेप को कानून को हाथ में लेना माना जायेगा, यह कभी उचित साबित हो सकता है और कभी अनुचित भी। इसके कड़ुए और मीठे परिणाम दोनों पक्षों को भुगतने पड़ेंगे।

इस नाटक में तथ्यों को तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत किया गया है। सुनने में आया है कि सरकार (सेंसर बोर्ड) द्वारा मंजूर आलेख में, मंचन के समय अनेक भड़काने वाली बातों को जोड़ा गया। इसके लेखक कहते हैं, जब दर्शक इस नाटक को देखकर बाहर निकलें तब गांधीजी की प्रतिमाओं को तोड़ दें एवं गांधीजी के नाम के बोर्डों को फोड़ दें, तब वे इस नाटक को सफल मानेंगे। बात बिलकुल साफ है। *भड़काने के उद्देश्य से ही इस नाटक को लिखा गया है एवं उसमें भी चबाने एवं दिखाने के दांत अलग-अलग रखे गये हैं ताकि कानून के चंगुल से बचा जा सके। यह विवेक-बुद्धि की चूक नहीं है, सोच-समझकर की गयी बेइमानी है। ऐसे कृत्यों का बचाव करने एवं इसे न्यायोचित साबित करने वाले की बुद्धि को क्या कहेंगे! संक्षेप में यह एक मानसिक विकृति है। समाज को गलत हकीकत परोसकर गलत रास्ते पर ले जाने का आपराधिक प्रयत्न है।*

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में हमारा विश्वास है और, इसके लिए जेल भी गये हैं, परंतु स्वतंत्रता की शर्त है—सत्य का पालन एवं संयम। स्वतंत्रता का अर्थ स्वच्छन्दता नहीं है।

प्रश्न : गोडसे का बचावनामा एक व्यवस्थित विचार लगता है। अनेकों को वह स्वीकार्य लगता है। आपको क्या लगता है?

उत्तर : गोडसे को गांधी की हत्या के बाद अपना बचावनामा तैयार करने के लिए काफी समय मिला। वह पढ़ा-लिखा तो था ही, इसलिए मिले हुए समय का उपयोग उसने अपने पाप-कृत्य को पुण्य का मुखौटा पहनाने में किया। शत-प्रतिशत झूठ को उसने सत्य की तरह सजाने का प्रयत्न किया। परंतु लोकतंत्र में हमने दंडशक्ति सरकार को सौंपी है। दंड देने का अधिकार सरकार के सिवा किसी को नहीं, इसलिए हत्या हत्या है, उसका बचाव नहीं हो सकता।

अब रही बात इसके व्यवस्थित प्रस्तुति एवं प्रभावपूर्ण होने की। यह संभव है कि सामान्य लोग भावनावश भड़काने वाली बातों से चौंधिया कर निरुत्तर हो जायं। न्यायालय में वकील शब्दजाल एवं वाक-पटुता से बड़े-बड़े न्यायमूर्तियों को भुलावे में नहीं डाल देते? सच को झूठ एवं झूठ को सच नहीं कर देते?

→पड़ा। बाद में खाने-पीने की अनिच्छा होने लगी और स्वास्थ्य गिरता गया। कमजोरी के कारण बोलने की भी ताकत नहीं रही। आखिर तक सिर्फ मेरा नाम ही जोर से बोलते थे। उनकी पूरी सेवा हमने की, इसका हमें संतोष है।

काका आज हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन मन इस बात को मानने के लिए तैयार नहीं हो पा रहा है। उनका तेजमय मुखमंडल हमेशा मेरे सामने रहता है और लगता है कि बस अभी वे 'नीता' कह कर बुलायेंगे।

हमें भी उनके दिखाये मार्ग पर चलने की उतनी ही शक्ति मिले यही कामना करती हूं। देशभर में कोने-कोने से लोगों ने सांत्वना संदेश भेजे हैं, मैं उन सबों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करती हूं। ❑

ऐसा गोडसे ने भी किया होगा। पर इससे वह अपने अपराध से बच नहीं सकता। एक तो उसने पाप किया और दूसरे उसके बचाव में झूठा वक्तव्य तैयार कर लाया।

प्रश्न : गोडसे ने कहा है कि उसने (1) गांधीजी द्वारा देश का विभाजन करने तथा इसे स्वीकार करने और (2) पाकिस्तान जिसने भारत के विरुद्ध युद्ध छेड़ रखा था, उसे उसके हिस्से के 55 करोड़ रुपये भारत सरकार से दिलवाने के कारण गांधी की हत्या की। ये दोनों मुद्दे ऐसे थे कि किसी का भी खूल खौल जाय। इस संबंध में आपको क्या लगता है?

उत्तर : गांधीजी की हत्या के आठ प्रयास हुए। इसमें से तीन प्रयासों में नाथूराम गोडसे शामिल था और उन सभी प्रयासों के लिए पुणे के कुछ कट्टर रूढ़िवादी जिम्मेवार थे। हत्या के छह में से चार प्रयासों के समय देश के विभाजन एवं 55 करोड़ रुपयों की बात स्वप्न में भी नहीं थी, फिर उस समय हत्या के प्रयत्नों के क्या कारण थे? संक्षेप में कहें तो एक अंग्रेजी कहावत याद आती है— Any Excuse serves an evil-doer पापी को पाप करने के लिए बहाना चाहिए। यह तो कभी भी और कहीं भी मिल सकता है। उसे हत्या करनी थी, जो भी हानि हो। हत्या के बाकी प्रयत्न हुए तब क्या था?...वही प्रवक्ता, वही पुलिस, वही न्यायाधीश और वही जल्लाद। नाथूराम को यह सब बनाया किसने?

हत्या के प्रयत्नों की लिखित घटना निम्न प्रकार है :

1. 1934 में पुणे नगरपालिका द्वारा गांधीजी को सम्मानित करने के लिए आयोजित समारोह में जाते समय बम फेंका गया। भूल से बम अगली गाड़ी पर लगा पर गांधीजी पिछली गाड़ी में थे। इस घटना में नगरपालिका के मुख्य अधिकारी तथा दो पुलिसकर्मी सहित कुल सात लोग गंभीर रूप से घायल हुए। इस हमले के समय विभाजन या 55 करोड़ की बात कहां थी? बावजूद उसके यह प्राणघातक हमला किया गया।

2. जुलाई 1944 में गांधीजी जब पंचगनी में थे तब एक दिन छुरा लेकर एक व्यक्ति गांधीजी के सामने आ गया। यह आदमी नाथूराम गोडसे था, ऐसी गवाही पुणे के सुरती लॉज के मालिक मणिशंकर पुरोहित ने दी थी। महाबलेश्वर के कांग्रेस के भू. पू. सांसद एवं सतारा जिला मध्यवर्ती बैंक के तत्कालीन अध्यक्ष श्री भि. दा. भिसारे गुरुजी ने नाथूराम के हाथ से छुरा छीन लिया था। गांधीजी ने उसके बाद तुरंत ही नाथूराम गोडसे को मिलने के लिए बुलाया। परंतु वह नहीं आया।

जो लोग आज कहते हैं कि विचार का जवाब विचार से देना चाहिए, उन लोगों को इस घटना को याद करना चाहिए। गांधीजी तो मिलने आने वालों से हमेशा मिलते ही थे, बावजूद इसके नाथूराम नहीं मिला, यह एक हकीकत है। इस बार भी विभाजन या 55 करोड़ रुपयों की बात नहीं थी। फिर हत्या का प्रयास क्यों?

3. तीसरा प्रयास सितंबर 1944 में हुआ। गांधीजी मुहम्मद अली जिन्ना से वार्ता के लिए मुम्बई जाने वाले थे। उस अवसर का गलत फायदा उठाने के लिए पुणे का एक ग्रुप वर्धा गया था। इनमें एक व्यक्ति ग. ल. थत्ते के पास से पुलिस को छुरा मिला। थत्ते का कहना था, यह छुरा उसने उस गाड़ी के टायर को फोड़ने के लिए रखा था, जिसमें गांधीजी जाने वाले थे। परंतु गांधीजी के निजी सचिव श्री प्यारेलाल लिखते हैं कि उस दिन सबेरे उनके पास पुलिस अधिकारी डी. सी. पी. का फोन आया कि प्रदर्शनकारी अमंगलकारी घटना की तैयारी करके आये थे। गांधीजी का आग्रह था कि वे अकेले प्रदर्शनकारियों के साथ चलते-चलते जायेंगे एवं जब तक प्रदर्शनकारी उन्हें गाड़ी में बैठने की अनुमति नहीं देंगे तब तक उनके साथ ही चलते रहेंगे। परंतु गांधीजी के निकलने का समय होने से पहले ही पुलिस ने प्रदर्शनकारियों को पकड़ लिया। इस समय विभाजन को स्वीकार करने या 55 करोड़ रुपयों की बात कहाँ थी?

4. 29 जून, 1946 को चौथा प्रयत्न किया गया। गांधीजी एक विशेष रेलगाड़ी द्वारा बम्बई से पुण जा रहे थे। तब नेरल एवं कर्जत स्टेशन के बीच रेलवे लाइन पर बड़े-बड़े पत्थर रखकर गाड़ी को गिराने का षड्यंत्र किया गया। रात का समय होने के बावजूद ड्रायवर की सावधानी के कारण दुर्घटना नहीं हुई पर इंजिन को क्षति पहुंचने की बात स्वीकार की गयी। इस बार पाकिस्तान के सुझाव को लेकर वार्ता चल रही थी। यह ठीक है पर गांधीजी विभाजन के विरोधी थे, यह भी उतना ही सत्य है। उन्होंने सार्वजनिक तौर पर कहा था कि विभाजन उनकी लाश पर होगा। विभाजन को टालने के लिए उन्होंने माउंटबेटन को यहां तक सुझाया था कि प्रधानमंत्री का पद जिन्ना को सौंपकर अंग्रेज भारत से चले जायं। यानी समझौता की ही बात थी। विभाजन को कतई स्वीकार नहीं ही किया गया था। और 55 करोड़ की बात तो उस समय सपने में भी नहीं थी। फिर हत्या का प्रयास क्यों किया गया? इस घटना के बाद प्रार्थना-सभा में इसका उल्लेख करते हुए गांधीजी ने कहा, *''मैं सात बार इस प्रकार के प्रयासों से बच गया हूं। मैं इस प्रकार मरने वाला भी नहीं हूं, मैं तो 125 वर्ष जीने वाला हूं।''* इस बात का उल्लेख *नाथूराम गोडसे* ने अपने मराठी सामयिक 'अग्रणी' में करते हुए लिखा—*'परंतु जीने कौन देगा?'* यानी गांधीजी की हत्या का निर्णय उसने कब का कर लिया था।

5 एवं 6. मदनलाल पहवा ने जनवरी 20 को बम फेंककर हत्या का असफल प्रयास किया। 30 जनवरी को नाथूराम गोडसे ने गांधीजी की हत्या की। 12 जनवरी, 1948 के बाद हुई इन घटनाओं के प्रसंग में विभाजन एवं 55 करोड़ का मुद्दा उपस्थित हुआ था, इससे पहले यह कभी नहीं था।

इससे यह स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है कि हिन्दूवादी हत्या का षड्यंत्र वर्षों से करते आये थे। उन्हें तो अपने पाप को ढँकने के लिए बहाने की आवश्यकता थी। जिस वक्त जो मिला वही सही।

.

(चुनीभाई वैद्य की पुस्तक 'गांधी की हत्या : क्या सच, क्या झूठ' से प्रकाशन क्रमश जारी रहेगा। **–कार्य. सं.**)

स्मृति-शेष

बाबा की कहानी, काका की जुबानी

जब बाबा ने मुझसे मैत्री का हाथ मांगा

❑ चुनीभाई वैद्य

5 सितंबर, 1962; वह दिन मेरे जीवन का ऐतिहासिक यादगार दिन बन गया, उस दिन पूज्य विनोबाजी असम की अपनी डेढ़ वर्ष की सुदीर्घ पदयात्रा समाप्त करके तत्कालीन पूर्व पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) जाने को निकले, पदयात्रा बहुत सुबह चार बजे शुरू हुई। असम के हम सभी सर्वोदय कार्यकर्ता उनको विदाई देने के लिए आये थे। मैं यात्रा के छोर पर चल रहा था। करीब पांच बजे सुबह मुझको बुलावा आया, ''बाबा आपको बुलाते हैं''। दूरी के कारण मैं थोड़ा दौड़ कर बाबा के पास पहुंचा, उनके दोनों हाथ पकड़कर उनके अंतर्वासी दो कार्यकर्ता श्री बालभाई और श्री जयभाई चल रहे थे। उनसे हाथ छुड़ाकर बाबा ने मुझसे कहा, ''मेरा हाथ थामो''।

मुझको आश्चर्य-सा लगा। दो हाथ पकड़ने वाले दोनों कार्यकर्ता हैं, फिर भी मुझको हाथ पकड़ने के लिए क्यों कहा? मैंने उनका दाहिना हाथ पकड़ा, कुछ ताकत से ही पकड़ा ताकि वे वृद्धजन गिर न जायें।

उन्होंने मुझसे कहा, ''ऐसे नहीं, एक मित्र दूसरे मित्र का हाथ पकड़ता है वैसा। ढीला, पकड़ते हुए भी मुक्त जैसा।''

मुझमें बुद्धि कम थी कि शताब्दी का सबसे बड़ा विद्वान पुरुष मुझसे मैत्री का हाथ मांग रहा था और मैं समझा नहीं।

विनोबाजी 24-25 भाषाएं जानते थे और दुनिया के सब महान धर्मों का उन्होंने गहराई से अध्ययन किया था। हिन्दू शास्त्रों के अलावा कुरान, बाइबल भी उन्हें कंठस्थ थे। ऐसा आदमी मेरा मैत्री का हाथ मांगता था और मैं नहीं समझा। मैंने तो केवल उनके कहने के मुताबिक उनका हाथ पकड़ा और उनके साथ चलने लगा।

कुछ देर के बाद उन्होंने अपने हाथ की उंगलियां दिखाकर पूछा, ''इनको क्या कहते हैं?''

उनके सवाल से मुझको कुछ आश्चर्य-सा हुआ, यह भी कोई सवाल है? फिर भी मैंने उत्तर दिया, ''उंगलियां'।

बाद में दोनों पैर की उंगलियां बारी-बारी

से दिखाकर कहा कि ''इनको क्या कहते हैं? ''इनको क्या कहते हैं? ''इनको क्या कहते हैं?''

बाद में कहने लगे, ''जानते हो? इनको सिर—extremities—देह का सिरा भी कहते हैं!''

स्वाभाविक था! शरीर के अंतिम छोर पर आया हुआ था, इसलिए उनको सिरा भी कहते हैं!''

मैंने कहा 'जी हां!''

सिखाने का उनका यह तरीका था! बाद में पूछा, ''यह छोर ठंडा पड़ जाये तो क्या होगा?''

''सर्दी से मर जायेगा!''

बाद में कहने लगे, **''असम हमारे देश का सिरा है! उसकी उष्मा बनी रहनी चाहिए, वह अगर ठंडा हो जाता है तो सारे देश के लिए खतरा है!''**

बाद में चीन के साथ हमारे संबंधों में आ रही कड़वाहट का संदर्भ देते हुए कुछ रुक कर आगे कहने लगे, ''अब तू यहां आया है, यहां के ऊपर से नीचे तक के—मुख्यमंत्री से लेकर सामान्य ग्रामजन तुमको जानते हैं! तूने यहां की भाषा भी ठीक से सीख ली है! अब तू यहीं रह जा और प्रेम और सेवा कार्य से इस प्रदेश के संबंधों में उष्मा बनाये रखने के काम में तुमको मदद करनी है! कुल मिलाकर बाबा का कहना था कि यह देश का सीमावर्ती हिस्सा है! यहां की प्रजा की सेवा द्वारा यहां प्रेम से ऊष्मा भरा संबंध बना रहे सो आवश्यक है। अतः उनके जाने के बाद भी में असम में बना रहूं! मैं कहता रहा कि ना बाबा, यहां स्थानीय कार्यकर्ताओं के और मेरे स्वभाव में कोई मेल नहीं है, बिलकुल मेल नहीं है! उनके साथ काम करना बिलकुल जमता नहीं है!

यहां कुछ स्पष्टता के साथ बता दूं कि असम की जनता का कुछ हिस्सा अपने को भारत की जनता से अलग समझता था! देश के अन्य राज्यों में से वहां गए लोगों को वे लोग विदेशी (बिदेखी) कहते थे! और देश के अन्य राज्यों को इंडिया कहते थे! इस प्रकार एक परायापन का भाव और उस अनुपात में कुछ प्रेम का अभाव था! किन्तु उसके कारण मेरा कोई खास नुकसान नहीं हुआ था! उनकी वह दुर्भावना कुछ वाजिब थी! क्योंकि बाहर से असम जाने वाले लोग केवल धनोपार्जन के लिए जाते हैं! यह चालीस साल पहले की बात है! आज स्थिति क्या है सो मैं नहीं कह सकता!

हां, फिर से अपनी बात करें!

बाबा ने कहा, ''अपने प्रेम और सेवा-कार्य से इस प्रदेश में ऊष्मा बनाये रखने में अपना योगदान देने के लिए तू यहीं रहेगा और कहीं नहीं जायेगा!''

मैं एकदम चौंक गया, मैंने कहा, ''नहीं बाबा, मैं यहां रहने वाला नहीं! मैंने यहां से छोड़ने की तारीख निश्चित कर रखी है!''

बात आगे बढ़ी! बाबा मुझको कहते गये, मुझको यहीं रहना चाहिए, और मैं अस्वीकार करता गया! कुछ मिनटों के बाद उनकी आवाज में कुछ रुक्षता का भाव सुनाई

दिया, ''मैं कोई अपने निजी काम के लिए थोड़े ही कह रहा हूं! देश की समस्या की दृष्टि से मैं यह कह रहा हूं!''

मैंने भी जरा रुक्ष होते हुए कहा, ''लेकिन मैं रहना नहीं चाहता! तब आप उतना आग्रह क्यों करेंगे?''

कुछ और समय मौन!

धीरे-धीरे उनका हाथ मेरे हाथ से छूटता गया! मैत्री का मांगा हुआ हाथ छूट गया! लेकिन उसकी जो गंभीरता थी वह मैं अल्पबुद्धि नहीं समझ सका!

मैंने अपनी चलने की गति कुछ धीमी कर दी, पीछे पड़ता गया और दूरी बढ़ गयी!

पाकिस्तान की सीमा आ गयी थी! उन लोगों के साथ थोड़ी-बहुत प्रेम की बातें करके पूज्य बाबा को विदा करके हम असम के कार्यकर्ता लौट गये! हम सब लोगों के मन कुछ भारी-भारी से थे!

गुवाहाटी जाकर मैं अपने काम में लगा! दिन बीतते गये!

नवंबर माह का वह खूनी अशुभ दिन आया! चीन ने भारत के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की और आक्रमण कर दिया! सीमा पर हमारी तैयारी कुछ कम रही होगी! इसलिए हमारी सीमा की चौकियां एक के बाद एक गिरने लगीं! नेफा में और नेफा की सीमा से सटकर आये हुए गांव के लोग मारे डर के अपना-अपना सामान बांधकर निराश्रित (refugees) बनकर गुवाहाटी की ओर आने लगे! उन सबके लिए छावनियां बनाना, खाने-पीने-रहने का इंतजाम करना आदि कामों में मुझे लगना पड़ा! बाहर से आये हुए विशेष रूप से व्यापारी लोग अपना कीमती माल-सामान लेकर अपनी गाड़ियों में भागकर असम से बाहर जाने लगे! स्थानीय लोगों के लिए वह एक तिरस्कार की घटना थी कि उनके संकटकाल में ये लोग असम छोड़कर भाग रहे थे। केन्द्र सरकार ने भी हमारी सेना को असम से हटाकर असम और बंगाल की सीमा पर रखा! यह भी स्थानीय जनता के लिए एक तिरस्कार की बात बन गयी! पूरा वातावरण बहुत उत्तेजित था।

इधर हम लोग अपने राहत कार्यों में लगे थे! मैं असम छोड़कर जाने वाला हूं, सो तो कई लोग जानते थे! एक बड़ी बहन ने मुझको डांटते हुए कहा, ''भागने लगा तो तेरी टांग तोड़ दूंगी! ''मैंने हंसते हुए कहा, ''बाईदेव, मैं तो नहीं भागूंगा, लेकिन आप अपनी भी संभालिये! कहीं आप भाग खड़ी न हों!''

गुवाहाटी में मैं चांदमारी आश्रम में रहता था! जाड़े के दिन थे! दोपहर को आश्रम के रसोईघर में खाना खाकर मैं अपने कमरे के पास आया! दोपहर के करीब बारह का समय था! धूप में पीठ सेंकने के लिए मैं जमीन पर बैठा और धूप की तरफ अपनी पीठ की! पीछे एक पगडंडी बनी थी! कुछ देर बाद वहां से एक आवाज आयी, स्त्री की आवाज थी, आश्रम के एक परिवार की बहन पदुमी बाईदेव की वह आवाज थी!

''आप जायेंगे,...हमारा क्या होगा?''

आर्दता से भरी एक स्त्री की आवाज सुनकर मुझको ऐसा आघात लगा जैसे पीठ में किसी ने खंजर मारा हो! मैं अपना सिर घुमाकर उनकी ओर देख नहीं सका!

फिर से वही आवाज, ''आप तो जायेंगे,...हमारा क्या होगा?...अभी-अभी तो हम आजाद हुए, और इतने में अब फिर से गुलाम बनना होगा?''

आर्तनाद से भरी वह आवाज चली गयी! मेरा साहस नहीं हुआ कि मैं उनकी ओर देखूं! मैं उठकर अपने कमरे में गया! बिस्तर पर जरा लंबी खींची, निद्रा आने के पहले ही तंद्रावस्था की स्थिति थी!

मैं बाहरी अहाते में खड़ा हूं! मैंने अपने दोनों हाथ पीछे की तरफ भिड़ा रखे हैं! आश्रम एक टेकड़ी पर बसा हुआ है! मैं देखता हूं कि सामने की ओर से नीचे तलहटी में से चार अलग-अलग जगह से चार चीनी सैनिक अपनी बंदूकों पर बेयोनेट बढ़ाये हुए मेरी ओर आ रहे थे! मैं स्थिर भाव से उनकी ओर देख रहा था! उनके जूतों लगी लोह की नालों की आवाज सुनाई देती थी!

उसी समय अचानक दृढ़ता के साथ मन में संकल्प किया, ''अब यहीं रहना है! असम चीन बन जाये तो चीन में और बना रहे तो भारत में, लेकिन यहीं रहूंगा, अब कहीं नहीं जाऊंगा!'' साथ ही मन में एक हास्यास्पद विचार आया, ''लेकिन चीन वालों ने अपने वहां अफीम पर प्रतिबंध लगाया है! सो तो ठीक है! लेकिन वे अगर चाय पर भी प्रतिबंध लगायेंगे तो मेरी तो मुसीबत हो जायेगी!'' मुझको अपनी मूर्खता पर हंसी आयी! इतनी गंभीर बात के बीच मुझको अपनी चाय की पड़ी थी!

सैनिक नजदीक पहुंच रहे थे! उनके जूते में लगी लोहे की नाल की आवाज सुनाई देती थी! मेरे कमरे के दरवाजे के जंजीर की आवाज आयी! तंद्रावस्था टूटी! उठकर दरवाजा खोला! देखा तो बाहर डाकिया खड़ा था! उसके हाथ में एक लिफाफा था, जो उसने मेरी तरफ बढ़ाया! मैंने वह ले लिया!

डाकिया ठप-ठप आवाज करता हुआ दूसरी ओर जाने लगा। उसके पैर की पठानी चप्पल में लगे हुए लोहे की नाल की आवाज सुनाई देती रही!

मैंने देखा लिफाफा विनोबाजी के पड़ाव से आया था! कुर्सी पर बैठकर लिफाफे को खोला, पढ़ने लगा! पत्र संक्षेप और स्पष्ट था! लिखा था, ''मैंने तुमको कहा था कि अब असम में ही रुक जाओ! लेकिन तुम अपने जाने के निर्णय पर पुनर्विचार करो!''

मैंने चिट्ठी को सिर से लगाया, तुरंत एक कोरा कागज लिया और उस पर लिखा, *''पूज्य बाबा, आपका पत्र मिलने के कुछ ही पूर्व मेरा संकल्प हुआ था कि अब बाकी की जिन्दगी यहीं बिताऊंगा! आपके पत्र ने मेरे उस संकल्प पर आपके आशीर्वाद की मुहर लगा दी है! अब मैं यहीं हूं!*

विनोबाजी के उक्त आदेश को मान कर मैं बारह वर्ष असम में रहा। हमारी संस्कृति में बारह वर्ष का एक तप माना जाता है। एक तप पूरा करके मैंने असम छोड़ा! उस बात को आज चालीस-पैंतालिस वर्ष हो गये! लेकिन असम के साथ मेरे संबंध आज भी वैसे ही ऊष्मा भरे ताजा और जीवंत हैं! ❑

सर्व सेवा संघ का अधिवेशन सफलतापूर्वक सम्पन्न

- धार्मिक और साम्प्रदायिक सदभाव के लिए गांधीजनों का सत्याग्रह करने का निर्णय
- गांधी के हत्यारे की मूर्ति लगाने की घोर निन्दा
- सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश से रोक लगाने की मांग
- चुनीभाई वैद्य सहित कई गांधीवादियों को भावभीनी श्रद्धांजलि।

अधिवेशन-समाचार

गांधीजनों के अखिल भारतीस संगठन सर्व सेवा संघ के 26-27 दिसंबर को रानी, राजस्थान में सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ, जिसमें विश्व एवं राष्ट्र की कई महत्त्वपूर्ण स्थितियों पर चिन्तन-मनन हुआ। अधिवेशन में चर्चा के विषय थे—प्राकृतिक आपदाओं से सबक, वर्तमान शिक्षा-पद्धति एवं हमारा विकल्प तथा वर्तमान राष्ट्रीय परिस्थिति एवं हमारी भूमिका। इस अधिवेशन में 14 राज्यों के 345 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। भाई महादेव विद्रोही की अध्यक्षता में आयोजित अधिवेशन में विश्व में बढ़ते धार्मिक तथा साम्प्रदायिक उन्माद पर चर्चा करते हुए बोको हरम द्वारा नाइजीरिया में 300 महिलाओं की बिक्री तथा हत्या, सीरिया में धर्म परिवर्तन न करने पर 150 महिलाओं की हत्या, पेशावर में 134 निर्दोष स्कूली छात्रों की निर्मम हत्या जैसी घटनाओं पर गहरी चिन्ता व्यक्त की गयी तथा मृतकों को श्रद्धांजलि अर्पित की गयी। भारत में धर्म परिवर्तन तथा हिन्दू महासभा द्वारा मेरठ सहित देश के अन्य शहरों में महात्मा गांधी के हत्यारे की मूर्ति की स्थापना तथा महिमा मंडन की निन्दा करते हुए राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री तथा सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश से इसे तत्काल रोकने की मांग की गयी है।

सर्व सेवा संघ के राष्ट्रीय प्रवक्ता भवानी शंकर कुसुम ने एक वक्तव्य में कहा कि ऐसी घटनाएं न केवल राष्ट्रपिता और न्यायपालिका का अपमान है, बल्कि मानव मूल्यों को क्षति पहुंचाने वाली तथा देश के सामाजिक सौहार्द को नष्ट करने वाली है, जिसे तुरंत रोका जाना आवश्यक है।

सर्व सेवा संघ राष्ट्र की एकता को खंडित करने एवं देश के ताने-बाने को तोड़ने तथा साम्प्रदायिकता का जहर फैलाने तथा हत्या को महिमा मंडित करने के कृत्य के विरुद्ध शहीद दिवस पर 30 जनवरी को जिला मुख्यालयों, 12 फरवरी को सर्वोदय दिवस पर राज्य स्तर पर जहां-जहां राष्ट्रपिता बापू की अस्थियां विसर्जित की गयी थी, उन स्थानों तथा 25-26 मार्च 2015 को दिल्ली के राजघाट/जंतर-मंतर पर सत्याग्रह किया जायेगा।

राजस्थान प्रदेश सर्वोदय मंडल की अध्यक्ष तथा अधिवेशन की संयोजक आशा बोथरा ने राजस्थान के प्रमुख शहरों में 30 जनवरी को सर्वधर्म प्रार्थना सभा कर धार्मिक सद्भाव के लिए जन-जागरण की घोषणा की है।

पाली जिले के खीमेल में स्थित 63 वर्ष पूर्व स्व. गोकुल भाई भट्ट तथा राजस्थान की प्रथम सरकार के उद्योग मंत्री सिद्धराजजी ढड्ढा जैसे सर्वोदय जगत के तपोनिष्ठ सेवकों द्वारा स्थापित सर्वोदय केन्द्र पर भाजपा नेता के दबाव में षड्यंत्र पूर्वक किये गये कब्जे की अधिवेशन में निन्दा करते हुए मंख्यमंत्री तथा प्रधानमंत्री से केन्द्र को कब्जे से मुक्त कराने तथा घटना की न्यायिक जांच कराने की मांग की गयी। लगभग 500 की संख्या में गांधीजन ने सर्वोदय केन्द्र की जमीन पर अवैध कब्जा के विरुद्ध में एक रैली निकाली और प्रशासन व समाज का ध्यान इस समस्या की ओर आकृष्ट किया।

अधिवेशन में 90 वर्ष से अधिक की आयु वाले 3 वरिष्ठ गांधीजनों—डॉ. रामजी सिंह (बिहार), श्री त्रिलोकचंद गोलेछा (जोधपुर) तथा श्री हनुमानदास स्वामी (जयपुर) को उनकी सामाजिक सेवाओं के लिए सार्वजनिक अभिनंदन किया गया।

अधिवेशन में दिवंगत सभी साथियों को दो मिनट का मौन रखकर भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की गयी, जिनमें वयोवृद्ध गांधीवादी चुनीभाई वैद्य भी शामिल थे।

प्रधानमंत्री के नाम पत्र...

प्रिय प्रधानमंत्री जी,

जयजगत!

आपका ध्यान एक ऐसे मुद्दे की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं, जिसमें एक सार्वजनिक संस्था पर कब्जा करने के लिए आपके नाम एवं फोटो का उपयोग किया जा रहा है।

सन् 1951 में राजस्थान के संस्थापक श्री गोकुलभाई भट्ट, वरिष्ठ सर्वोदय नेता श्री सिद्धराजजी ढड्ढा आदि ने श्रम साधना के प्रयोग हेतु सर्वोदय केन्द्र खीमेल (उपखंड-बाली, जिला-पाली) की स्थापना की। राजस्थान के चोटी के सर्वोदय सेवक यहां रहकर मजदूरों की तरह श्रम करते हुए खादी ग्रामोद्योग तथा सर्वोदय के कार्यों का प्रचार-प्रसार करते थे।

दिनांक 7 अक्टूबर 2014 को एस. डी.एम. बाली ने राजनीतिक दबाव में आकर तथा सारे तथ्यों को ताक पर रखकर संस्था के स्वर्गीय मंत्री श्री धनपतराय मेहता के सुपुत्र श्री आनंद कुमार को संस्था का स्वामी घोषित कर दिया (वाद सं. 270/99)। सायं 4.00 बजे फैसला सुनाया गया और 5.00 बजे तहसीलदार, पटवारी और पुलिस कब्जा दिलाने 20 कि. मी. दूर सर्वोदय केन्द्र खीमेल पहुंच गये। यह दर्शाता है कि यह सब पूर्वनियोजित था और सांठगांठ कर किया गया। किसी न्यायालय में कोई फैसला होने पर वादी को अगले न्यायालय में अपील करने का समय दिया जाता है। एस. डी.एम. कोई न्यायालय नहीं है और कार्यपालिका में भी सबसे निचले स्तर का अधिकारी होता है। उसका यह कदम न्याय के सिद्धांतों को धता बताने वाला है।

श्री आनंद कुमार भाजपा के सदस्य हैं। उनके इस कृत्य से पार्टी एवं आपकी अनावश्यक बदनामी हो रही है। श्री आनंद कुमार ने कब्जा लेते ही सर्वोदय केन्द्र में पहले से तैयार आपका तथा श्री ओमप्रकाश माथुर के होर्डिंग लगा दिये। होर्डिंग लगाने के पीछे उनका आशय प्रशासन पर दबाव बनाकर उन्हें अपने पक्ष में करना है।

आपसे निवेदन है कि इसमें तुरंत हस्तक्षेप कर एक गैर राजनैतिक, लाभनिरपेक्ष गांधीवादी संस्था को न्याय दिलाते हुए इस अवैध कब्जे से मुक्त करायें।

की गयी कार्रवाई की जानकारी हमें भी देंगे तो प्रसन्नता होगी। **–महादेव विद्रोही,**
अध्यक्ष, ससेसं

कविता

अघटन घटना

❑ राष्ट्रकवि दिनकर

उस दिन अभागिनी संध्या की
अभिशप्त गोद में गिरे
देश के पिता,
राष्ट्र के कर्णधार,
जग के नरोततम,
भारत के बापू महान
प्रार्थना-मंच पर, इन्द्रप्रस्थ के अंचल में
गोली खाकर।
कहने में जीभ सिहरती है,
मूर्च्छित हो जाती कलम,
हाय, हिन्दू ही था वह हत्यारा।
तब भी बापू की छाती से
करुणा ही अन्तिम बार वेग से बह निकली
शोणित का बनकर स्रोत; स्यात्
मानव के निर्घिन चरम पाप को देख विकल-
लज्जित होकर हो गयी लाल
गंगाजल-सी परिपूत,
दूध-सी निर्मल-धवल अहिंसा ही।
कूटस्थ पुरुष ने किया मृत्यु का सहज वरण;
बोले केवल ''हे राम'' और आनन्दलीन
आनन पर धारे शान्ति जोड़ कर-कंज गिरे
प्रार्थना निरत होकर अदृश्य के चरणों पर,
अन्तिम प्रार्थना, न होता जिसका अन्त कभी।
कांपा सहसा ब्रह्माण्ड,
प्रकृति चीत्कार उठी,
रुक गयी सृष्टि के उर की एक घड़ी धड़कन,
मानो तीनों गोलियाँ गई हों
समा उसी की छाती में।
''यह क्या हो गया?'' पूछते हैं नभ के
अबोध नक्षत्र, विकल;
''यह क्या हो गया?'' पूछती हैं अवसन्न
दिशाएँ चकित, मौन;
''यह क्या हो गया?'' पूछती है उठ-उठ
पिछली प्रत्येक सदी;
''यह क्या हो गया?'' पूछता है जग का
समीपवर्ती भविष्य।
अघटन घटना, क्या समाधान?
जग माँग रहा है समाधान,
''क्यों बापू पर गोलियाँ चलीं?''
आने वाली पीढ़ियाँ यही पूछेंगी,
क्या उत्तर दूँगा? क्या मुख ले आगे बढ़ूँ,
सदी पर सदी गरजती आएगी?
क्या होगा मेरा हाल,
सही उत्तर न अगर वह पाएगी?
लिखता हूँ अतः वज्र,
ये वर्ण अमिल काले-काले;
अधिकार किसी को नहीं
सत्य के मुखड़े पर पर्दा डाले।
लिखता हूँ कुंभीपाक नरक के
पीव-कुंड में कलम बोर;
बापू का हत्यारा पापी
था कोई हिन्दू ही कठोर,
कायर, नृशंस, कुत्सित, पामर,
दनुजों में भी अति घृणित दनुज,
मानव न जिसे पहचान सके
ऐसे जघन्य विकराल मनुज;
सोचा, क्यों बिना विभेद किए
यह सब पर ठंडक बरसाती;
पापी ने डाली फाड़ चाँदनी
की करुणा-विह्वल छाती।
असहिष्णु नहीं सह सका, छाँह
सबको देता क्यों तरु उदार
निर्मम ने निधड़क चला दिया
पादप के धड़ पर ही कुठार।
खल ने सोचा, निस्सीम जलद
क्यों धरती पर खुलकर बरसे?
इससे अच्छा है, पानी को
हम भी तरसें, जग भी तरसे।
वारिद के पावन तूल-पुंज में
पामर ने दी फूँक आग;
जल गया जगत का दया-मेघ,
जल गया सुधा-पूरित तड़ाग।
चाँदनी मरी, पादप सूखा,
जलकर वारिद हो गया शेष;
जग के समक्ष काले मुख पर
वध लिए खड़ा है हिन्द देश।
पापी! यों ही तुम खड़े रहो
सदियों के सम्मुख झुका शीश,
भोगो हत्या का कुटिल दंश,
भोगो वध की विष-भरी टीस
निर्वाक उपेक्षित खड़े रहो
गरदन में वध का कफन डाल।
बोलोगे मनोव्यथा किससे,
पूछेगा आकर कौन हाल?
देखो, वे सूरज और चाँद
तुमसे कतराकर जाते हैं;
खग-मृग भी चलते चौंक,
तुम्हारी छाया से घबराते हैं।
जग में सबसे हिलती-मिलती
सदियों पर सदियाँ आयेंगी;
बसर, एक तुम्हारे पास पहुरूँच
वे आँख बचा बढ़ जायेंगी;
जीवन-जुलूस से दूर खड़े
तरसोगे तुम बतियाने को,
हमदर्द किसी हमराही को
अन्तर की कथा सुनाने को।
हरि के हिय में दे शूल, वृद्ध,
निर्दोष पिता का घात करे,
है कौन यहां जो उस जघन्य
पापी से भी दो बात करे?
हाँ, एक दयामय था ऐसा
जो सबको गले लगाता था,
पातक को दे पद-धूलि
पापियों को बढ़कर अपनाता था।
यह देह उसी की गिरी टूट,
पापी! अब भी तो होश करो;
गति नहीं अन्य, गति नहीं अन्य,
इन चरणों को पकड़ो, पकड़ो।
रोओ, मिट्टी से लिपट, गहो
अब भी ये चरण अभय-कारी;
रोओ भुज में भर वही वक्ष
जिसमें तुमने गोली मारी।
रो-रोकर माँगो क्षमा,
त्राहि! धरती न पाप से फट जाए;
आसेतु हिमाचल विकल, व्यग्र,
यह भूमि न कहीं उलट जाए!
पातकी देश पर बरस पड़े
हरि का न कहीं कटु कोप अनल;
धंस पड़े न पर्वत कूट कहीं,
उड़ जाए नहीं नदियों का जल।
बापू की हत्या हुई किसी भी दिन
कुछ भी हो सकता है।
रो-रोकर माँगो क्षमा
अश्रु से करो पितृ-शव का अभिषेक;
अगुणी, कृतघ्न जन के अब भी
हैं बापू ही आधार एक! ❑

संपादक के नाम पत्र

श्रद्धेय संपादक महोदय,

'सर्वोदय जगत' पत्रिका का 'अगस्त-क्रांति विशेषांक' पढ़ा—मन अत्यधिक प्रसन्न हुआ। पूर्व में प्रकाशित अंकों में यह सर्वश्रेष्ठ कृति है। आशा है भविष्य में भी पत्रिका के लेख सामग्री एवं प्रथम पृष्ठ चिर-स्मरणीय रहेगा। आपको बहुत-बहुत धन्यवाद। यह अंक मैं सदैव सँभाल कर रखूंगा, आपसे वादा करता हूं।

आपके द्वारा प्रकाशित इस पत्रिका की आजीवन सदस्यता से तात्पर्य क्या है, उसे पत्रिका कब तक भेजते रहेंगे? कृपया स्पष्ट सूचित करने का कष्ट करेंगे। शेष कुशल।

–राजेन्द्र सिंह,
अध्यक्ष, शाजापुर (उ.प्र.)

× × ×

'सर्वोदय जगत' के अंक पूर्व में पक्षांत से भी एक माह पश्चात् मिलने एवं अब पक्षांत के आरंभ में मिलने पर साधुवाद का पत्र लिखा था, प्रकाशित भी हुआ। विगत 16-30 अगस्त एवं 1-15 सितंबर के अंक न मिलने की शिकायत पर दोनों एक साथ मिले। पत्र भी मिला।

16-30 सितंबर का अंक 2 अक्टूबर गांधी जयंती पर गांधी बाल मंदिल, जैसलमेर पधारे सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष भाई महादेव विद्रोही के पास देखने को मिला। हमें अभी तक पक्षांत से पत्रिका ही नहीं मिली। इस तरह मात्र चार दिन की चांदनी से पत्रिका की साख नहीं जमती है। कृपया पत्रिका समय पर पहुंचाने की पुख्ता व्यवस्था सुनिश्चित करावें। डाक व्यवस्था पर दोष मेरे मामले में संभव नहीं है। **–किशन गिरी गोस्वामी**
रामगढ़, जैसलमेर (राजस्थान)

× × ×

आपके पत्र द्वारा प्राप्त सुझाव के लिए धन्यवाद है। पत्रिका समय से मिले यह हमारी भरसक कोशिश है। **–का. सं.**

और अन्ततः : चुनीकाका को श्रद्धांजलि

'गांधी की हत्या : क्या सच, क्या झूठ' का पुनर्पाठ जरूरी

❑ अशोक मोती

वरिष्ठ गांधीवादी व सर्वोदयी नेता चुनीकाका नहीं रहे। उनके देहावसान से गांधीजन मर्माहत हैं और देश ने एक निडर सत्याग्रही खो दिया है। काका इस देश, खासकर गुजरात में लोक संघर्ष के सूत्रधार और जनक थे। वे सर्व सेवा संघ के मंत्री, प्रकाशन समिति के संयोजक, 'भूमिपुत्र' पत्रिका के संपादक थे और गांधी की हत्या पर अपनी पुस्तक 'गांधी की हत्या : क्या सच, क्या झूठ' के कारण बड़े चर्चित रहे। देश के दुर्गम स्थानों में काम करने में उनका जोड़ा नहीं था। उनकी निडरता उन्हें लोक संघर्षों से जोड़ती थी।

चुनीकाका के एकाएक देहावसान और देश में गांधी के हत्यारे को महिमामंडित किये जाने के सुनियोजित प्रयास के कारण अब गांधी की छाती में दागी गयी गोलियों ने हमारे हृदय में एक तीव्र टीस पैदा कर दी है और 'सर्वोदय जगत' का यह अंक उसी पीड़ा की उपज एवं देन है। इस अंक में प्रस्तुत आलेखों और विचारों तथा अन्य सामग्रियों को हमने 'स्मृति शेष' की तरह पेश किया है, जो हमारी विरासत है। 'सर्वोदय जगत' सर्व सेवा संघ का मुखपत्र एवं शांतिमय संघर्ष की वाहक पत्रिका है, जिसके माध्यम से हम अपने महापुरुषों के विचार लोगों तक पहुंचाते रहे। आज यह विशेषांक स्व. चुनीकाका के संघर्षशील जीवन को श्रद्धांजलि के रूप में समर्पित है।

गांधी की हत्या को हमने निःसंदेह भारत की धर्म-निरपेक्ष विचारों पर सांप्रदायिक विचारधारा का हमला माना है। लेकिन गांधी की हत्या से गांधी परास्त नहीं हुआ और न ही उनके हम जीवित प्रतीक ही नष्ट हुए। वे नष्ट कभी हत्यारों से होंगे भी नहीं।

लानत है इन धर्मान्धों को, जो बार-बार अपना रूप बदलकर समाज और राष्ट्र को तोड़ने के बाज नहीं आ रहे हैं। नाथूराम गोडसे की तो खुद की स्वीकारोक्ति है कि गांधी की हत्या के पीछे संघ की विचारधारा थी, इस स्वीकारोक्ति के बाद इन तत्त्वों की आम लोगों ने बुरी तरह अवहेलना करना शुरू की। अपने जनाधार को खिसकते देख, इन्होंने यह तय कर लिया कि उन्हें दिखाने के लिए सही गांधी को आत्मसात कर लेना है। संघ ने तो यह भी घोषणा की कि गांधीजी उनके लिए स्मरणीय हैं। संघ ने यह प्रचार भी किया कि गांधी उनके आदर्श हैं। सबसे मक्कारी यह है कि एक समय संघ ने नाथूराम गोडसे और संघ के बीच किसी संबंध के होने से साफ इनकार कर दिया था।

1974 के जेपी आंदोलन के दौरान देश पर तानाशाही के खतरे से निजात पाने के क्रम में उनकी नजदीकता आंदोलनकारियों से हुई। जेपी ने संघ का साथ तब इस शर्त पर लेना स्वीकार किया, जब इनके वरिष्ठ नेताओं ने अपने आप में बदलाव लाने का जेपी से वादा किया, जिसका प्रत्यक्षदर्शी इस पंक्ति का लेखक है। लेकिन इन्होंने गांधी को मारा तो जेपी को ठगा। स्वाभाविक रूप में इस जनआंदोलन के माध्यम से उनका संबंध फिर देश की राजनीति की मुख्य धारा से हो गया और केन्द्र में जनता सरकार के सहभागी भी बने। लेकिन इन्हें चैन कहां? सत्ताच्युत होने के बाद इनका अपना गुप्त एजेंडा जारी रहा। यही कारण रहा है कि इनकी भाषा सदैव बदलती रही।

2014 के संसदीय चुनाव की सफलता उनके इसी योजनाबद्ध प्रयास का परिणाम रहा। 'गांधी की हत्या : क्या सच, क्या झूठ' के रचयिता भाजपा के विजयी होते ही, इनकी गतिविधियों को ताड़ लिया और आशंका व्यक्त की। उन्होंने देश की तमाम समानधर्मी साथियों को एक खुला पत्र लिखकर देश को किसी अवांछित दिशा में ले जाने की आशंका व्यक्त करते हुए गांधीजनों से सतर्क रहने और लोक-शिक्षण के कार्य पर बल देने का पुरजोर आग्रह किया। चुनीकाका का एक साल पूर्व की आशंका अब साफ दिखने लगी, जब नाथूराम गोडसे को महिमा मंडित करने के साथ-साथ उस हत्यारे की मूर्ति लगाने की कोशिश भी की जाने लगी, कभी 'लव जेहाद' तो कभी 'घर वापसी' जैसे जुमले उछाले गये। तो दूसरी तरफ गांधी की तस्वीर सामने लगाकर गांधी-जेपी को भी आत्मसात करने की कोशिश होने लगी। क्रांति के प्रतीक चिह्न झाड़ू को हाथ में लेकर गांधी-झाड़ू-संघ का एक त्रिकोण बनाने की कोशिश हो रही है। ऐसी स्थिति में ही हम चुनीकाका का स्मरण हृदय से करते हैं और उनकी पुस्तक 'गांधी की हत्या : क्या सच, क्या झूठ' का पुनर्पाठ की बड़ी आवश्यकता महसूस करते हैं। चुनीकाका हमारे बीच नहीं हैं, जैसे गांधी और जेपी नहीं हैं, लेकिन उनके जो हम जीवित प्रतीक हैं, उत्तराधिकारी हैं, उनके आध्यात्मिक वंशज हैं, उनके शिष्य और शिष्याएं हैं और जो उनके पीछे चलने वाले हैं, रुकेंगे नहीं, अपने गुरु के पथ का अनुसरण करते चलेंगे और चलते ही रहेंगे और पूरे विश्व में शांति का पताका फहरा कर रहेंगे।

आइए, हम यहां अपने अग्नि-पुरुष स्व. चुनीकाका को अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। ❑

VSI-(E) 003 For the Year - 2015 to 2017 सर्वोदय जगत : 1-15 जनवरी, 2015 Regd.No. R.N.I.35495/78

'गांधी की हत्या : क्या सच, क्या झूठ' का पुनर्पाठ क्यों?

समानधर्मी मित्रो के नाम दो पत्र

(एक)

मित्रो,

आप सबको अपना साथी, मित्र और गांधी-परिवार का सदस्य मानकर यह पत्र लिख रहे हैं।

सन् 2014 के चुनाव-परिणाम घोषित होने के बाद अचानक एक नयी परिस्थिति सामने आयी है। संभव है कि यह देश को अवांछित दिशा में ले जाय। इसके अलावा, एक मानसिकता भी विकसित हुई है, जिसके बारे में विचार करना पड़ेगा।

अहमदाबाद के मुख्य मार्ग आश्रम रोड पर इन्कम टैक्स के पास गांधीजी की प्रतिमा का रात के अँधेरे में कायरतापूर्वक अंतिम संस्कार किया गया। इसके पहले भी अंतिम संस्कार की यह विधि कई बार की जा चुकी है। अतः गांधी-हत्या की यह मानसिकता इसके पहले बिलकुल नहीं थी, ऐसा नहीं कह सकते। परंतु अब पुनः रात के घने अंधकार में यह कृत्य क्यों दुहराया गया? क्या आरएसएस समर्थित श्री नरेन्द्र मोदी की सफलता और राजनीतिक परिवर्तन सामने दिख रहा था, इससे उत्साहित होकर?

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू को तो नये प्रधानमंत्री नरेन्द्रभाई ने एकाध वाक्य में ही निपटा दिया। पर गांधी की हत्या के मामले से जुड़े हुए वीर सावरकर के चित्र का विशेष सम्मान के साथ पूजन किया।

गांधीनगर के महात्मा मंदिर में गांधी के चित्र को साक्षी रखकर ऐसी विकास की योजनाओं के समझौते किये गये जो गांधी-विचार से बिलकुल विपरीत दिशा के हैं। और भी कई बातें सामने आयी हैं, जिन्हें जानना-समझना जरूरी है।

* हम ग्रामस्वराज की बात करते हैं, उनकी औद्योगिक विकास की दिशा गांवों को बरबाद कर रही है, किसानों की संख्या घटती जा रही है।

* हम धर्मनिरपेक्षता की बात करते हैं, उनके शिक्षण-संस्कार में सांप्रदायिकता है और जनमानस को भी वैसा ही बनाने की कोशिश की जा रही है।

* हम समाज के अंतिम जन के कल्याण की बात करते हैं, उन्हें फिक्र है समाज के प्रथम दर्जे के अदानी, अम्बानी, एसार सोलरीस जैसे लोगों की।

* हम गरीबों के लिए भूमि मांगते हैं और वे सस्ते में जमीन उपलब्ध कराते हैं समाज के अति धनाढ्य लोगों को।

* हम गांवों को लोगों के रहने लायक बनाना चाहते हैं, वे त्वरित गति से 100 नये शहर बसाना चाहते हैं।

* हम जीवन में सादगी और संयम की बात करते हैं, वे देश को बाजारवाद-भोगवाद की ओर ले जा रहे हैं।

यह सूची लम्बी हो सकती है, लेकिन हम इसे यहां रोकते हैं। इससे पूर्व भी ये बातें हम कहते रहे हैं लेकिन विकासवाद के तीव्र वेग को रोक नहीं पाये हैं। आज भी हम इसे रोक पायेंगे, ऐसा भ्रम नहीं पाल रहे हैं, लेकिन हम अपने दोनों हाथ ऊँचा उठाकर यह तो कह ही सकते हैं कि हम इसे नहीं मानते। हम इसका विरोध करते हैं।

मुद्दे की बात यह है कि विकास की वर्तमान संपूर्ण अवधारणा के बारे में वैश्विक स्तर पर पुनर्विचार की मांग उठ रही है, लेकिन भाजपा तो इसी विकासवाद की संतान है और वह एक प्रतिगामी और जुनूनी भूमिका निभा रही है। इसे ध्यान में रखते हुए नयी सरकार के एक-एक कदम का मूल्यांकन, समीक्षा करते हुए हमें सतत् लोक-शिक्षण का कार्य करते रहना होगा, साथ-साथ नया विकल्प भी लोगों के सामने, विचार के लिए, सक्रियता के साथ प्रस्तुत करते रहना होगा। इस संदर्भ में जब कोई प्रतिकार का प्रसंग आ जाय, तो हमें सक्रियता से प्रतिकार करने की तैयारी भी रखनी होगी।

इस दृष्टि से विचार-विमर्श के लिए सभी समानधर्मी साथियों और संगठनों की ओर से एक राष्ट्रीय गोष्ठी का आयोजन करने की बात भी सोची जा सकती है। **–चुनीभाई वैद्य**

(दो)

प्रिय भाई/बहन,

आपको विदित होगा ही कि साम्प्रदायिक शक्तियां जिसने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की हत्या की थी, एक बार पुनः सिर उठाने लगी हैं। इतना ही नहीं अब वे हत्या का महिमा मंडन कर रहे हैं और हत्यारे की प्रतिमा भी लगाने जा रहे हैं।

दिसंबर 2014 में रानी (राजस्थान) में हुए सर्व सेवा संघ की कार्यसमिति तथा अधिवेशन में इस राष्ट्र-विरोधी कृत्य पर गहरी चिंता व्यक्त की गयी। सर्व सेवा संघ मानता है कि ये कदम राष्ट्र की एकता एवं अखंडता को तोड़ने वाला है। इससे राष्ट्र का तानाबाना छिन्न-भिन्न हो सकता है।

अधिवेशन में शहीद दिवस 30 जनवरी 2015 को उन सभी जिला मुख्यालयों में जहां हमारे संगठन हैं तथा 12 फरवरी 2015 को, जहां-जहां गांधी की अस्थियां विसर्जित की गयी थीं और राज्य की राजशक्तियों में सर्वधर्म प्रार्थना आयोजित की जाये और रैलियां निकाली जायें। कौमी एकता और सर्वधर्म समभाव के संबंध में प्रेसवार्ता की जाय तथा अखबारों में वक्तव्य दिये जायें। श्री चुनीभाई वैद्य द्वारा लिखित 'गांधी की हत्या : क्या सच, क्या झूठ' का पठन किया जाय और इन तथ्यों की जानकारी जनता/प्रेस को दी जाये। इन कार्यक्रमों में सहमना संगठनों एवं जागरुक नागरिकों को अवश्य शामिल करें।

25 एवं 26 मार्च 2015 को दिल्ली के राजघाट/जंतर-मंतर पर हमारा राष्ट्रीय कार्यक्रम होगा। इसमें सर्व सेवा संघ के साथ-साथ गांधी विचार की कई राष्ट्रीय संस्थाएं और समानधर्मी संगठन शामिल होंगे। आपके यहां से दिल्ली के कार्यक्रम में अधिक से अधिक लोग आयें, इस दिशा में सभी को प्रयास करना होगा।

मित्रो, यह सवाल राष्ट्र की एकता और हमारे मूल्यों को चुनौती देने वाला है। अतः हमें पूरी शक्ति के साथ इसके विरुद्ध अभियान चलाना है और अपना संदेश घर-घर पहुंचाना है।

अपने कार्यक्रमों की जानकारी तथा अखबारों के कतरन हमें भी भेजेंगे तो प्रसन्नता होगी। **–महादेव विद्रोही**

अध्यक्ष, ससेसं

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा सुरभि प्रिन्टर्स, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार, कार्य.संपादक : अशोक मोती। छपी प्रतियाँ : 1450